इकाई 11 अखिल भारतीय एवं केन्द्रीय सेवाएँ

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्देश्य

11.1 प्रस्तावना

11.2 ऐतिहासिक विकास

11.3 अखिल भारतीय सेवाओं का गठन

- 11.3.1 भारतीय प्रशासनिक सेवा
- 11.3.2 भारतीय पुलिस सेवा
- 11.3.3 भारतीय वन सेवा

11.4 भारतीय प्रशासनिक सेवा का महत्व

11.5 अखिल भारतीय सेवाओं में भर्ती

- 11.5.1 अखिल भारतीय सेवाओं के कार्मिकों का प्रशिक्षण
- 11.5.2 संवर्ग-प्रबंध

11.6 अखिल भारतीय सेवाओं की आवश्यकता

11.7 केन्द्रीय सेवाएँ

- 11.7.1 भर्ती
- 11.7.2 प्रशिक्षण तथा संवर्ग-प्रबंध
- 11.7.3 भारतीय विदेश सेवा

11.8 सारांश

11.9 शब्दावली

11.10 संदर्भ एवं उपयोगी पुस्तकें

11.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

11.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद, आप

- अखिल भारतीय सेवाओं के ऐतिहासिक विकास, महत्व और आवश्यकता के बारे में समझ सकेंगे
- अखिल भारतीय सेवाओं में भर्ती तथा प्रशिक्षण के तरीकों की चर्चा कर सकेंगे; और
- केन्द्रीय सिविल सेवाओं के वर्गीकरण, भर्ती और प्रशिक्षण के तरीकों का विवेचन कर सकेंगे।

11.1 प्रस्तावना

भारतीय प्रशासनिक प्रणाली की एक अनोखी विशेषता यह है कि इसमें अखिल भारतीय सेवाओं जैसी कुछ ऐसी सेवाएँ बनाई जाती हैं जो केन्द्र तथा राज्य दोनों प्रशासनों के लिए समान रूप से होती हैं। इन सेवाओं के अधिकारी न तो पूरी तरह केन्द्र सरकार की सेवा में होते हैं, न ही पूरी तरह राज्य सरकारों के। वे किसी भी समय केन्द्र अथवा राज्य की किसी भी सरकार के तहत कार्यरत होते हैं। इन सेवाओं के अधिकारियों की भर्ती समान योग्यताओं और समान वेतनमान के आधार पर अखिल भारतीय स्तर पर होती हैं। सभी अधिकारियों को समान स्तर, समान अधिकार और समान सुविधाएँ मिलती हैं और ये सभी एक ही सेवा के अंग हैं।

अन्य संघीय शासन व्यवस्थाओं की तरह ही, भारतीय संविधान में केन्द्र और संघटक राज्यों में अपनी व्यवस्था चलाने के लिए अलग-अलग लोक सेवा आयोगों की व्यवस्था है। इस प्रकार केन्द्र के अंतर्गत आने वाले विषयों, जैसे रक्षा, आय कर, सीमा शुल्क, डाक और तार, रेलवे आदि के प्रशासन के लिए केन्द्रीय या संघीय सेवाएँ होती हैं। इन सेवाओं के अधिकारी पूरी तरह संघ सरकार के अधीन होते हैं। इसी तरह, राज्य सरकारों की अपनी-अपनी स्वतंत्र सेवाएँ होती हैं।

11.2 ऐतिहासिक विकास

ईस्ट इंडिया कम्पनी के जमाने में भारतीय सिविल सेवाओं के गठन के समय से ही भारत में सदा ही सेवाओं का अखिल भारतीय संवर्ग रहा है। धीरे-धीरे केन्द्र सरकार के लगभग सभी विभागों में अखिल भारतीय स्तर पर काम करने वाले अधिकारियों का संवर्ग बन गया। लेकिन ये सेवाएँ गवर्नर जनरल के अधीन नहीं थी, बल्कि सीधे भारत के राज्य सचिव के और उसकी परिषद् के अधीन थीं। अखिल भारतीय सेवा के किसी भी अधिकारी को परिषद् सहित भारत के राज्य सचिव परिषद के अलावा अन्य कोई अधिकारी नौकरी से बर्खास्त नहीं कर सकता था। अगर अधिकारी के साथ अनुशासनिक मामलों में बुरा सलूक हुआ हो तो उसे परिषद् में अपील करने का अधिकार था। कोई भारतीय विधान मंडल अखिल भारतीय सेवा के अधिकारी के वेतन, पेंशन आदि के मामलों में कोई प्रस्ताव पास करने का अधिकारी नहीं था।

ये उच्च वर्गीय सेवाएँ न तो जनमत का ध्यान रखती थीं और न ही उसके प्रति उत्तरदायी थीं। इसलिए 1919 के भारत सरकार अधिनियम में बहुत सीमित सुधारों के साथ जिस सुधार युग की शुरुआत हुई, उसके अनुकूल खुद को ढालना इन सेवाओं के अधिकारियों को मुश्किल लगा। 1924 में ली आयोग ने ऐसी कुछ अखिल भारतीय सेवाओं की समाप्ति की सिफारिश की, जो उन विभागों से संबंधित थी जिन्हें 1919 के अधिनियम के अंतर्गत भारतीयों को 'हस्तांतरित' कर दिया गया था। ऐसी सेवाएँ थीं — भारतीय शिक्षा सेवाएँ, भारतीय कृषि सेवाएँ, भारतीय चिकित्सा सेवाएँ और भारतीय इंजीनियरिंग सेवाओं की सड़क एवं निर्माण शाखा। लेकिन आयोग ने भारतीय सिविल सेवा, भारतीय पुलिस, भारतीय वन सेवा, भारतीय चिकित्सा सेवा और भारतीय इंजीनियरिंग सेवाओं की सिंचाई शाखा को आगे चलाने की सिफारिश की। आयोग ने इन सेवाओं के निरंतर भारतीयकरण किए जाने की भी सिफारिश की। आयोग ने यह सिफारिश भी की कि अगर किसी विभाग का नियंत्रण उत्तरदायी भारतीय मंत्रियों को हस्तांतरित किया जाए तो उस विभाग में उस समय कार्यरत

किसी भी ब्रिटिश अधिकारी को आनुपातिक पेंशन लेकर सेवानिवृत होने का अधिकार होना चाहिए। ये सिफारिशें अमल में लाई गईं।

1935 के भारत सरकार अधिनियम के अंतर्गत इन सेवाओं की स्थिति में और परिवर्तन आए। भारत के लोग हमेशा ही अखिल भारतीय सेवाओं की समाप्ति की माँग करते आए हैं। ब्रिटिश संसद की संयुक्त प्रवर समिति (Joint Select Committee), जो 1935 के अधिनियम के मसौदे पर विचार कर रही थी, उसके सामने 'ब्रिटिश भारत' के प्रतिनिधि मंडल ने यह तर्क रखते हुए कहा कि प्रान्तीय सरकारों को लोकप्रिय सत्ता के नियंत्रण में सौंपे जाने की स्थिति में यह उचित नहीं होगा कि भारत के मंत्री उन प्रान्तीय सरकारों के लिए अधिकारियों की और नियुक्ति करें। प्रतिनिधिमंडल ने यह माँग भी की कि भविष्य में सेवाओं में नियुक्ति और नियंत्रण भारतीयों के हाथों में हो। संयुक्त समिति ने इन माँगों को कुछ हद तक ही स्वीकार किया और आई.सी.एस., आई.पी. और आई. एम. एस. (सिविल) सेवाओं को जारी रखने की सिफारिश की। इन सिफारिशों को 1935 के अधिनियम की धारा 224 में शामिल किया गया। इस प्रकार, 1947 में आज़ादी के समय केवल दो अखिल भारतीय सेवाओं, भारतीय सिविल सेवा (आई.सी.एस.) और इंपीरियल पुलिस (आई.पी.) में ही सीधी भर्ती होती थी। आई.एम.एस. के लिए नियुक्तियाँ रोक दी गईं, इनके अलावा, समाप्त प्रायः (defunct) अखिल भारतीय सेवाओं के कार्यरत अधिकारी भी थे।

इन सेवाओं में सबसे ऊँची और सबसे महत्वपूर्ण भारत सिविल सेवा थी जिसे आमतौर पर आई सी.एस. नाम से जाना जाता है। उच्च वेतनमान और व्यापक अधिकारों तथा प्रतिष्ठा वाली इस सेवा को भारत में ब्रिटिश सरकार का 'इस्पाती ढाँचा' (steel frame) कहा जाता था। अंग्रेजों के भारत छोड़ते समय भारत में दस (10) अखिल भारतीय और बाइस (22) केन्द्रीय सेवाएँ थीं। नई भारतीय सरकार ने पुरानी सेवाओं के अधिकारों की गारंटी तो दी लेकिन साथ ही उन्होंने यह भी समझ लिया कि इस सेवाओं के स्थान पर भारतीयों द्वारा नियंत्रित और चलाई जाने वाली सेवाओं को लेना होगा। वास्तव में, सरदार पटेल ने 1946 में ही, जब वे गवर्नर जनरल की कार्यकारी परिषद् में गृह सदस्य थे, पुरानी आई.सी.एस. और आई.पी. के स्थान पर दो नई अखिल भारतीय सेवाओं - भारतीय प्रशासनिक सेवा (Indian Administrative Service – IAS) और भारतीय पुलिस सेवा (Indian Police Service – IPS) के गठन के लिए प्रान्तीय सरकारों की सहमति प्राप्त कर ली थी।

11.3 अखिल भारतीय सेवाओं का गठन

संविधान में भी अखिल भारतीय स्तर पर अधिकारियों वाली सिविल सेवाओं के गठन की व्यवस्था है। इसमें पहले से गठित भारतीय प्रशासनिक सेवा और भारतीय पुलिस सेवा दोनों सेवाओं का स्पष्ट उल्लेख किया है। (अनुच्छेद 312-2) संविधान में संघ की संसद को आवश्यकता पड़ने पर राष्ट्रीय हित में ऐसी ही अन्य अखिल भारतीय सेवाएँ गठित करने का अधिकार दिया गया है, लेकिन इसके लिए राज्य सभा के उपस्थित और मतदान में भाग ले रहे सदस्यों में दो-तिहाई के समर्थन से प्रस्ताव पास किया जाना ज़रूरी है। (अनुच्छेद 312-1) राज्य सभा में विभिन्न राज्यों के प्रतिनिधि होते हैं। अतः इसके समर्थन से नई सेवाओं के गठन के लिए राज्यों की सहमति सुनिश्चित की जाती है। संविधान संसद को इन सेवाओं में अधिकारियों की नियुक्ति और सेवा-शर्तों के बारे में कानून बनाने का भी अधिकार देती है। इसी अधिकार के तहत 1951 में अखिल भारतीय सेवा अधिनियम पारित किया गया। संविधान बनाए जाने के बाद केवल एक अखिल भारतीय सेवा — भारतीय वन सेवा — का गठन किया गया।

1951 में अखिल भारतीय सेवा अधिनियम पारित किया गया। इस के अनुच्छेद 3 के उप-अनुच्छेद (1) में दिए गए अधिकारों के अंतर्गत केन्द्र सरकार ने अखिल भारतीय सेवाओं के लिए नए नियम और विनियम बनाए। पुराने नियमों के कई हिस्सों के निरर्थक हो जाने के कारण ऐसा करना ज़रूरी था। इस अधिनियम के लागू होने से पहले जो नियम चल रहे थे, उन्हें जारी रखा गया। इस तरह अखिल भारतीय सेवाओं की सेवा-शर्तों के नियमों के दो वर्ग हो गए। ये थे, भारत मंत्री और परिषद् सहित गवर्नर जनरल द्वारा बनाए गए पुराने नियम, जिनके अंतर्गत भारतीय सिविल सेवा और भारतीय पुलिस अधिकारियों की सेवा शर्तें निर्धारित की जाती थीं और 1951 के अधिनियम के तहत् बनाए गए नए नियम भारतीय प्रशासनिक सेवा और भारतीय पुलिस सेवा पर लागू किए गए।

11.3.1 भारतीय प्रशासनिक सेवा

भारतीय प्रशासनिक सेवा (आई.ए.एस.) पुरानी भारतीय सिविल सेवा की सीधी उत्तराधिकारी है। एक अखिल भारतीय सेवा के रूप में, यह केन्द्र सरकार के सीधे नियंत्रण में है, लेकिन इसके साथ ही इसे राज्य संवर्गों (काडरों) में भी बाँटा गया है, जो संबंधित राज्य सरकारों के सीधे नियंत्रण में है। सेवा के अधिकारियों का वेतन और पेंशन राज्य सरकारों द्वारा दिए जाते हैं लेकिन अधिकारियों पर अनुशासनिक नियंत्रण रखने और दंडित करने का काम केन्द्र सरकार का है, जो संघ लोक सेवा आयोग की सलाह के आधार पर यह दायित्व निभाती है। चयन के बाद, अधिकारियों की विभिन्न राज्य संवर्गों में नियुक्ति हो जाती है। राज्य संवर्गों में अधिकारियों की संख्या इस तरह निर्धारित की जाती है कि कुछ अधिकारी संघ सरकार के अंतर्गत तीन, चार या पाँच वर्षों की एक या अधिक सेवा-अवधि के लिए प्रतिनियुक्त किए जा सकें और यह अवधि समाप्ति होने पर अपने राज्य के संवर्ग में वापस चले जाएँ। इससे यह सुनिश्चित हो जाता है कि संघ सरकार के पास ऐसे अधिकारी उपलब्ध हों जिन्हें राज्यों की स्थितियों का अनुभव और बुनियादी जानकारी हो। दूसरी ओर, राज्यों को इसका यह लाभ होता है कि उनके अधिकारी संघ सरकार की नीतियों और कार्यक्रमों से परिचित हो जाते हैं। ऐसी व्यवस्था से केन्द्र और राज्य दोनों ही सरकारों को लाभ होता है। अधिकांश अधिकारियों को कम से कम एक बार संघ सरकार के अंतर्गत काम करने का मौका मिलता है, कई अधिकारियों को यह मौका एक से अधिक बार भी मिलता है। वरिष्ठ अधिकारियों को सचिवालय में और सचिवालय से बाहर नियमित रूप से नियुक्त किए जाने की प्रणाली को सरकारी बोलचाल में सेवा अवधि प्रणाली कहा जाता है।

इस सेवा की एक और प्रमुख विशेषता इसका बहु-उद्देश्यीय स्वरूप है। इसमें ऐसे "सामान्य प्रशासनिक" (generalist administrators) होते हैं जिनसे समय-समय पर व्यापक विविधता भरे दायित्व निभाने की अपेक्षा की जाती है। उदाहरण के लिए, कानून व्यवस्था बनाए रखना, राजस्व की वसूली, व्यापार, वाणिज्य तथा उद्योग का नियमन, कल्याण कार्यक्रम, विकास और विस्तार कार्य आदि। संक्षेप में, भारतीय प्रशासनिक सेवा, न्यायपालिका के लिए अधिकारी उपलब्ध कराने के अलावा, वे सारे काम करती है जो पहले भारतीय सिविल सेवा करती थी। इस प्रकार यह एक सामान्य कामकाज देखने वाली (जनरलिस्ट) सेवा है, जिसके अधिकारियों की प्रशासन के करीब-करीब सभी शाखाओं में नियुक्ति हो सकती है।

11.3.2 भारतीय पुलिस सेवा

भारतीय पुलिस सेवा प्रारंभिक अखिल भारतीय सेवाओं में से एक है। (स्वतंत्रता-पूर्व भी यह सेवा थी) यह भारतीय प्रशासनिक सेवा से दो बातों में भिन्न है — (i) इसके ज्यादातर अधिकारी राज्यों में ही काम करते हैं क्योंकि केन्द्र में पुलिस से संबंधित थोड़े से पद होते

हैं। (ii) इसका वेतनमान और दर्जा भारतीय प्रशासनिक सेवा से नीचे है। इस सेवा के अधिकारी भी इसी सम्मिलित अखिल भारतीय सिविल सेवा परीक्षा के ज़रिए ही भर्ती किए जाते हैं जिसके ज़रिए भारतीय प्रशासनिक सेवा, भारतीय विदेश सेवा और अन्य केन्द्रीय सिविल सेवाओं के लिए अधिकारियों की भर्ती की जाती है।

भारतीय पुलिस सेवा के लिए चुने गए अधिकारियों को पहले पाँच महीने का बुनियादी प्रशिक्षण दिया जाता है, फिर विशेष प्रशिक्षण के लिए हैदराबाद स्थित सरदार पटेल राष्ट्रीय पुलिस अकादमी में भेजा जाता है। इस दौरान पढ़ाए गए विषयों और हथियारों के प्रयोग के प्रशिक्षण आदि का पुलिस अधिकारी के सामान्य काम-काज से सीधा संबंध है। प्रशिक्षण पाठ्यक्रम में अपराध मनोविज्ञान, अपराध का पता लगाने में काम आने वाले वैज्ञानिक उपकरण, भ्रष्टाचार निवारक उपाय और किसी मुसीबत में तत्काल सहायता पहुँचाने के तरीके शामिल हैं। साल भर के प्रशिक्षण के बाद परिवीक्षाधीन अधिकारी (प्रोबेशनरी) को संघ लोक सेवा आयोग द्वारा आयोजित एक परीक्षा पास करनी होती है। इसके बाद उसे पुलिस-सहायक अधीक्षक के पद पर नियुक्त किया जाता है। लेकिन इस नियुक्ति से पूर्व उसे एक वर्ष का प्रशिक्षण कार्यक्रम भी पूरा करना होता है, उसे व्यावहारिक प्रशिक्षण में अनेक अधीनस्थ अधिकारियों का काम करना भी सिखाया जाता है। केवल इसके बाद ही उसे पुलिस सहायक अधीक्षक नियुक्त किया जाता है।

अखिल भारतीय सेवा के रूप में यह मूलतः संघ सरकार के नियंत्रण में है, लेकिन राज्य संवर्गों में बंटी है। हर संवर्ग संबंधित राज्य सरकार के सीधे नियंत्रण में होता है। इस सेवा का प्रशासन गृह मंत्रालय करता है लेकिन इसके कार्मिकों के बारे में सामान्य नीतियों का निर्धारण कार्मिक तथा प्रशासनिक सुधार विभाग करता है।

11.3.3 भारतीय वन सेवा

भारतीय वन सेवा ऐसी एकमात्र सेवा है जिसका गठन स्वतंत्रता के बाद किया गया। 1963 में संसद द्वारा एक अधिनियम पारित किए जाने के बाद इस सेवा ने काम करना शुरू किया। इसका वेतनमान और दर्जा दोनों अखिल भारतीय सेवाओं - भारतीय प्रशासनिक सेवा और भारतीय पुलिस सेवा - से नीचे है। संघ लोक सेवा आयोग इस सेवा के अधिकारियों के चयन के लिए अलग से परीक्षा आयोजित करता है। इसमें लिखित परीक्षा और साक्षात्कार शामिल हैं। हालाँकि यह अखिल भारतीय सेवा है लेकिन यह सामान्य सिविल सेवा नहीं है, इसका स्वरूप और काम-काज विशिष्टता और विशेषज्ञता वाला है। इस सेवा का प्रबंध कार्मिक और प्रशासनिक सुधार विभाग करता है। यह विभाग सभी अखिल भारतीय सेवाओं में नियुक्त, अनुशासन और सेवा-शर्तों की व्यवस्था करता है।

सेवा के लिए चुने गए अधिकारी तीन महीने के बुनियादी पाठ्यक्रम के लिए मसूरी भेजे जाते हैं। उन्हें अन्य अखिल भारतीय और केन्द्रीय सेवाओं के लिए चुने गए अधिकारियों के साथ प्रशिक्षण दिया जाता है। बुनियादी पाठ्यक्रम के बाद परिवीक्षाधीन (probationer) अधिकारी को देहरादून स्थित भारतीय वन संस्थान में दो वर्ष का कड़ा प्रशिक्षण कार्यक्रम पूरा करना होता है, जिसकी समाप्ति के बाद उन्हें एक परीक्षा पास करनी होती है। तभी उन्हें नियुक्ति दी जाती है।

भारतीय वन सेवा भी अन्य अखिल भारतीय सेवाओं की तरह संवर्ग आधारित (Cadre-based) सेवा है। अन्य अखिल भारतीय सेवाओं की तरह इसके अधिकारी भी प्रतिनियुक्त होकर केन्द्र सरकार की सेवा में आ सकते हैं, लेकिन प्रतिनियुक्ति की अवधि पूरी होते ही उन्हें अपनी सेवा में वापस जाना होता है।

अपनी सेवा में किसी कार्यालय में नियुक्ति के तुरंत बाद अधिकारी को एक वर्ष तक परिवीक्षा पर रखा जाता है और उसके बाद उसे उसी संवर्ग में किसी दूसरे कार्यालय में नियमित नियुक्ति दी जाती है। अधिकारियों का कार्य-क्षेत्र राज्यों या केन्द्र शासित क्षेत्रों में होता है।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थानों का प्रयोग कीजिए।

ii) इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1) भारत सरकार अधिनियम 1919 से 1947 में आज़ादी मिलने तक की अवधि के दौरान अखिल भारतीय सेवाओं के विकास का विवरण दीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) अखिल भारतीय सेवाओं से संबंधित सांविधानिक प्रावधान क्या हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

3) भारतीय प्रशासनिक सेवा के संदर्भ में 'सेवा अवधि' और 'दोहरे नियंत्रण' की प्रणाली को समझाएँ।

.....

.....

.....

.....

.....

4) भारतीय प्रशासनिक सेवा (आई.ए.एस.) और भारतीय पुलिस सेवा (आई.पी.एस.) के बीच प्रमुख भिन्नताएँ क्या हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

11.4 भारतीय प्रशासनिक सेवा का महत्व

अब हम भारतीय प्रशासनिक सेवा की विशिष्ट भूमिका की चर्चा करेंगे। संघीय शासन व्यवस्था का आदर्श है — सरकार के दो स्तरों के बीच मिल-जुलकर काम, सहयोग और तालमेल। भारतीय प्रशासनिक सेवा के तहत् ऐसे अधिकारियों का एक सामान्य पूल बनाया गया है, जो पूरी तरह न तो केन्द्र सरकार के नियंत्रण में हैं, न ही राज्य सरकार के, लेकिन दोनों ही जगह शीर्ष पदों पर काम करते हैं। भारत की यह व्यवस्था संघीय शासन के आदर्श के बहुत करीब है। केन्द्र और राज्य में अगर एक ही समन्वित संघीय सेवा के अधिकारी कार्य करते तो यह राज्यों की स्वायत्तता के प्रतिकूल होता। दूसरी ओर, अगर संघ सरकार की अपनी सेवाएँ नहीं होतीं तो इसके दो परिणाम हो सकते थे — या तो राज्यों की सेवाओं के अधिकारी केन्द्र सरकार के एजेंट भर रह जाते या फिर केन्द्र सरकार राज्य की सेवाओं के आचरण के असहयोगपूर्ण होने की स्थिति में एकदम असहाय हो जाती। भारत में ये दोनों आशंकाएँ समाप्त कर दी गई हैं। यहाँ संघ और राज्यों की पृथक और स्वतंत्र सेवाएँ बनाकर और इसके साथ ही वरिष्ठ स्तर पर अधिकारियों का सामान्य संवर्ग बनाकर, सरकार के दोनों स्तरों के बीच तालमेल, सहयोग और ज़रूरत पड़ने पर संयुक्त कार्रवाई की व्यवस्था की गई है। यहाँ यह आशंका भी समाप्त कर दी गई है कि श्रेष्ठ प्रतिभाएँ राज्य सेवाओं की बजाए संघीय सेवाओं में जाना पसंद करें और इस तरह राज्यों की सेवाओं में अपेक्षाकृत कम प्रतिभाशाली लोग ही आ सकें। अखिल भारतीय सेवाओं में राष्ट्रीय स्तर पर संघ सरकार द्वारा नियुक्ति की जाती है। इन सेवाओं में जाना श्रेष्ठतम प्रतिभाशाली युवक पसंद करते हैं और फिर चुने गए अधिकारियों की विभिन्न राज्यों में नियुक्ति हो जाती है। इस प्रकार, इन सेवाओं के ज़रिए राज्यों की बड़ी संख्या में प्रतिभाशाली अधिकारी मिल जाते हैं। राज्यों की सेवाओं को बेहतर बनाने का शायद इससे अच्छा तरीका नहीं हो सकता। इसके साथ ही, राज्यों से केन्द्र में और केन्द्र से राज्यों में लगातार स्थानांतरण होते रहने से ये अधिकारी सरकार के दोनों स्तर की प्रशासनिक अड़चनों से परिचित और उन्हें सुलझाने में निपुण हो जाते हैं। इस प्रकार ये अधिकारी संघ और राज्य प्रशासनों के बीच प्रशासनिक तालमेल कायम करने वाले सर्वोत्तम एजेंट हो सकते हैं।

11.5 अखिल भारतीय सेवाओं में भर्ती

अब हम संक्षेप में अखिल भारतीय सेवाओं में भर्ती के तरीके को समझाएंगे। जैसा पहले बताया जा चुका है, ये भर्ती केन्द्र सरकार प्रति वर्ष संघ लोक सेवा आयोग द्वारा आयोजित प्रतियोगी परीक्षा के आधार पर करती है। अनेक सेवाओं जैसे भारतीय विदेश सेवा, भारतीय प्रशासनिक सेवा, भारतीय पुलिस सेवा और केन्द्रीय सेवाओं की पहली और दूसरी श्रेणी के लिए सम्मिलित परीक्षा होती है। इस परीक्षा में बैठने वाले प्रत्याशी की आयु 21 वर्ष से 30 वर्ष के बीच होनी चाहिए। विश्वविद्यालय की स्नातक उपाधि धारक (बी.ए./बी.एस.सी. या समकक्ष उपाधि) प्रत्याशी ही इस परीक्षा में बैठ सकता है। संघ लोक सेवा आयोग पहले उच्च स्तर की लिखित परीक्षा लेता है और फिर व्यक्तिगत साक्षात्कार के रूप में व्यक्तित्व परीक्षा लेता है। पहली परीक्षा प्रत्याशी की बौद्धिक क्षमता और किताबी जानकारी का पता लगाने के लिए होती है और दूसरी परीक्षा उसके व्यक्तित्व और चरित्र को आँकने के लिए ली जाती है। यह परीक्षा प्रणाली ब्रिटिश "सामान्य" (general) प्रणाली पर आधारित है, न कि अमेरीकी "विशेषज्ञ" (specialised) तरीके पर।

अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों के प्रत्याशियों के लिए अधिकतम पाँच वर्षों तक की और अन्य पिछड़े वर्गों के प्रत्याशियों के लिए अधिक से अधिक तीन वर्षों तक की आयु

सीमा में छूट का प्रावधान है। परीक्षा देने के अनुमत्य प्रयासों की संख्या चार तक सीमित की गई है परन्तु अन्य पिछड़े वर्गों के लिए सात प्रयासों की छूट और अनुसूचित जातियों/ अनुसूचित जनजातियों के प्रत्याशियों के लिए कोई सीमा नहीं है।

1979 से पहले एक ही प्रतियोगी परीक्षा आयोजित की जाती थी। तीन अनिवार्य प्रश्न पत्र होते थेः निबंध, सामान्य ज्ञान और सामान्य अंग्रेज़ी — प्रत्येक 150 अंकों का होता था। परन्तु वैकल्पिक प्रश्न पत्रों की संख्या तीन थी और प्रत्येक तीन-तीन सौ अंकों का होता था और भारतीय प्रशासनिक सेवा तथा भारतीय वन सेवा के लिए विषयों की एक अन्य सूची से दो अतिरिक्त विषय होते थे, इनमें से प्रत्येक के दो-दो सौ अंक होते थे। लिखित परीक्षा में उत्तीर्ण होने वाले प्रत्याशी को साक्षात्कार के लिए बुलाया जाता था, इसके 300 अंक होते थे। जो प्रत्याशी साक्षात्कार में अर्हकारी न्यूनतम 33 प्रतिशत अंक प्राप्त नहीं कर सकता था उसे असफल घोषित किया जाता था और इसे 1958 में हटा दिया गया। साक्षात्कार के अंकों को लिखित परीक्षा के अंकों में जोड़ दिया जाता था। इसके बाद आयोग योग्यताक्रम में चुने गए प्रत्याशियों की सूची सरकार को भेज देता था।

अखिल भारतीय सेवाओं में भर्ती की उपर्युक्त प्रणाली की कई दृष्टिकोणों से आलोचना हुई। और संघ लोक सेवा आयोग ने प्रणाली की गहनता से समीक्षा करने का निर्णय किया। इस प्रयोजन के लिए 1973 में संघ लोक सेवा आयोग द्वारा प्रो. डी. एस. कोठारी की अध्यक्षता में भर्ती और चयन विधियों पर समिति नियुक्त की। समिति ने 1976 में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की और निम्नलिखित सिफारिशें कीः

1) मुख्य परीक्षा के लिए प्रत्याशियों को छाँटने के लिए (स्क्रीन करने के लिए) प्रारंभिक परीक्षा आयोजित करना।

2) लगभग नौ महीने के बुनियादी पाठ्यक्रम के लिए लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय अकादमी में प्रवेश के लिए प्रत्याशियों के चयन के लिए मुख्य परीक्षा आयोजित करना।

3) बुनियादी पाठ्यक्रम की समाप्ति पर संघ लोक सेवा आयोग द्वारा संचालित किए जाने वाले 400 अंकों की प्रशिक्षणोत्तर परीक्षा आयोजित करना, इसका प्रयोजन सिविल सेवाओं के लिए प्रासंगिक व्यक्तिगत गुणों और विशेषताओं का मूल्यांकन करना है।

4) मुख्य परीक्षा और लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय अकादमी में प्रशिक्षणोत्तर परीक्षा में प्राप्त अंकों के आधार पर विशेष सेवा के लिए प्रत्याशी को सेवाओं के लिए उसकी वरीयता को ध्यान में रखकर निर्दिष्ट करना।

5) प्रत्याशियों को भाषा प्रश्न पत्र के अलावा सभी प्रश्न पत्रों का उत्तर संविधान की आठवीं सूची में सूचीबद्ध भाषाओं में से किसी भी भाषा या अंग्रेज़ी में देने की अनुमति देना।

परीक्षा योजना (प्रारंभिक और मुख्य) के बारे में कोठारी आयोग की सिफारिशें सरकार ने स्वीकार की और 1979 में संघ लोक सेवा आयोग द्वारा क्रियान्वित की गई।

सतीशचन्द्र समिति

संघ लोक सेवा आयोग ने उच्चतर सिविल सेवाओं के चयन प्रणाली की समीक्षा करने और मूल्यांकन करने तथा आगे सुधार के सुझाव देने के लिए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (University Grants Commission – UGC) के पूर्व अध्यक्ष सतीश चन्द्र की अध्यक्षता में 1988 में एक अन्य समिति गठित की। समिति ने अपनी रिपोर्ट 1993 में प्रस्तुत की और सरकार ने 1993 की सिविल सेवा परीक्षा से कुछ सिफारिशों को धीरे-धीरे क्रियान्वित कर रही है। सरकार द्वारा स्वीकृत मुख्य सिफारिशें निम्न प्रकार हैं:

1) सामान्य परीक्षा आयोजित करने की पद्धति जारी रहनी चाहिए।

2) निबंध प्रश्न पर 1993 की परीक्षा से लागू किया जाना चाहिए और प्रत्याशियों को आठवीं अनुसूची में सम्मिलित भाषाओं में से किसी एक भाषा या अंग्रेज़ी में उत्तर देने की अनुमति दी जानी चाहिए।

3) व्यक्तित्व परीक्षा के अंकों को 250 अंकों से बढ़ाकर 300 किए जाने चाहिए।

4) वैकल्पिक विषयों की सूची से कुछ भाषाओं, जैसे फ्रैंच, जर्मन, अरबी, पालि को निकाल दिया जाना चाहिए।

5) प्रारंभिक और मुख्य दोनों परीक्षाओं के लिए चिकित्सा विज्ञान को वैकल्पिक विषय के रूप में शामिल किया जाना चाहिए।

6) सेवाओं का आवंटन प्रत्याशी के रैंक और प्राथमिकता के आधार पर होना चाहिए।

7) लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय अकादमी को उच्च स्तरीय व्यावसायिक संस्था में विकसित किया जाना चाहिए।

8) प्रशिक्षण संस्थाओं को पर्याप्त बुनियादी सुविधाएँ और उपयुक्त संकाय सुविधा दी जानी चाहिए।

9) विश्वविद्यालय अनुदान आयोग अल्पसंख्यक समुदायों के विद्यार्थियों के लिए कोचिंग कक्षाएँ चलाने की स्कीम की समीक्षा कर सकता है।

सिविल सेवा परीक्षाओं का वर्तमान पैटर्न

प्रतियोगिता परीक्षा में तीन क्रमिक अवस्थाएँ हैं (क) सिविल सेवा (प्रारंभिक), (ख) सिविल सेवा (मुख्य), और (ग) साक्षात्कार

क) प्रारंभिक परीक्षा में वस्तुपरक प्रकार (बहु विकल्प प्रश्नों) के दो प्रश्न पत्र होते हैं और अधिकतम 450 अंकों के होते हैं: 150 अंकों का सामान्य अध्ययन पर प्रश्न पत्र और 300 अंकों का एक अन्य प्रश्न पत्र जो वैकल्पिक विषयों की सूची से एक विषय पर होगा। प्रश्न पत्र हिन्दी और अंग्रेज़ी दोनों भाषाओं में होते हैं। प्रारंभिक परीक्षा केवल स्क्रीनिंग परीक्षा के रूप में होती है। इस परीक्षा में प्रत्याशियों द्वारा प्राप्त अंक उनकी योग्यताक्रम के अंतिम निर्धारण के लिए नहीं गिने जाते हैं। मुख्य परीक्षा में दाखिल किए जाने वाले प्रत्याशियों की संख्या वर्ष में रिक्तियों की कुल संख्या के बारह या तेरह गुणा होते हैं।

ख) मुख्य परीक्षा में लिखित परीक्षा और साक्षात्कार परीक्षा होती है।

लिखित परीक्षा में परम्परागत विवरणात्मक प्रकार के नौ प्रश्नपत्र होते हैं। नौ प्रश्न पत्र हैं :

यह नोट किया जाए कि भारतीय भाषाओं और अंग्रेज़ी के प्रश्न पत्र मैट्रिक्यूलेशन (दसवीं कक्षा) या समकक्ष स्तर के होते हैं और अर्हकारी स्वरूप के हैं, प्रश्न पत्रों में प्राप्तांक रैंकिंग के लिए नहीं गिने जाएँगे। इसके अलावा केवल उन्हीं प्रत्याशियों के निबंध, सामान्य ज्ञान और वैकल्पिक विषयों के प्रश्न पत्रों का मूल्यांकन किया जाएगा जो संघ लोक सेवा आयोग द्वारा निर्धारित ऐसा न्यूनतम स्तर प्राप्त करते हैं। परन्तु भारतीय भाषाओं पर प्रश्न पत्र - I, कुछ उत्तरपूर्वी राज्यों, जैसे मणिपुर, मिज़ोरम के प्रत्याशियों के लिए अनिवार्य है।

प्रश्न पत्र - I	संविधान की आठवीं अनुसूची में सम्मिलित भाषाओं से प्रत्याशी किसी एक भारतीय भाषा को चुन सकता है।	300 अंक
प्रश्न पत्र - II	अंग्रेज़ी	300 अंक
प्रश्न पत्र - III	निबंध	200 अंक
प्रश्न पत्र - IV	सामान्य ज्ञान	प्रत्येक प्रश्न पत्र के 300 अंक
प्रश्न पत्र - V		
प्रश्न पत्र - VI	वैकल्पिक विषयों की सूची से कोई दो विषय चुने जा सकते हैं	
प्रश्न पत्र - VII & VIII	वैकल्पिक विषयों की सूची से कोई दो विषय चुने जा सकते हैं	प्रत्येक प्रश्न पत्र के 300 अंक
प्रश्न पत्र - IX	प्रत्येक विषय के दो प्रश्न पत्र होंगे	

परीक्षा के लिए प्रश्न पत्र परम्परागत (निबंध) प्रकार के हैं और प्रत्येक प्रश्न पत्र तीन घंटे का है। प्रत्याशी सभी प्रश्न पत्रों का उत्तर भाषा के प्रश्न पत्रों को छोड़कर, आठवीं अनुसूची में सम्मिलित किसी एक भाषा में दे सकते हैं। परन्तु प्रश्न पत्र भाषा प्रश्नपत्रों को छोड़कर हिन्दी और अंग्रेज़ी में होते हैं।

सिविल सेवा (मुख्य परीक्षा) जैसा कि संघ लोक सेवा आयोग द्वारा निर्धारित किया जाता है, में न्यूनतम अर्हकारी अंक प्राप्त करने वाले प्रत्याशियों को व्यक्तित्व परीक्षा के लिए साक्षात्कार के लिए लाया जाता है। प्रत्याशियों का साक्षात्कार बोर्ड द्वारा लिया जाता है और सामान्य रुचि के प्रश्न पूछे जाते हैं। साक्षात्कार का उद्देश्य सार्वजनिक सेवा में कैरियर के लिए प्रत्याशी की व्यक्तिगत उपयुक्तता का मूल्यांकन किया जाता है। परीक्षा का अभिप्राय प्रत्याशी की मानसिक योग्यता का आकलन करना है। साक्षात्कार के 250 अंक हैं।

प्रत्याशियों का रैंक क्रम सूची मुख्य परीक्षा और साक्षात्कार में प्राप्त कुल अंकों के आधार पर तैयार की जाती है। भिन्न-भिन्न सेवाओं में प्रत्याशियों का आवंटन परीक्षाओं में उनके रैंक और प्राथमिकता के आधार पर किया जाता है। रैक क्रम सूची संघ लोक सेवा आयोग द्वारा आगे की आवश्यक कार्रवाई के लिए सरकार को भेजी जाती है।

11.5.1 अखिल भारतीय सेवाओं के कार्मिकों का प्रशिक्षण

अखिल भारतीय और केन्द्रीय सेवाओं के लिए चुने गए प्रत्याशियों को पाँच महीने का बुनियादी प्रशिक्षण दिया जाता है और फिर उन्हें अपनी सेवा के अनुरूप विभिन्न संस्थानों में विशेष प्रशिक्षण दिया जाता है। बुनियादी पाठ्यक्रम का उद्देश्य उच्च सेवाओं के अधिकारियों को उस सांविधानिक, आर्थिक और सामाजिक ढाँचे की जानकारी देना है, जिसके तहत उन्हें काम करना होगा। यही ढाँचा काफी हद तक उन नीतियों और कार्यक्रमों को निर्धारित करता है, जिनको बनाने और लागू करने के काम में इन अधिकारियों को अपना योगदान देना है। इसके साथ ही अधिकारियों को सरकारी तंत्र और लोक प्रशासन के व्यापक सिद्धान्तों की भी जानकारी होनी चाहिए। बुनियादी पाठ्यक्रम में सिविल सेवाओं के लक्ष्य तथा दायित्व तथा पेशे की नैतिकता की जानकारी देने का प्रयास किया जाता है। यह पाठ्यक्रम विभिन्न सेवाओं के अधिकारियों के बीच समान जन-सेवाओं और व्यापक रूप से समान दृष्टिकोण के प्रति जुड़ाव की भावना भी पैदा करता है। पाँच महीने के बुनियादी पाठ्यक्रम के बाद भारतीय प्रशासनिक सेवा को छोड़कर अन्य सेवाओं के परिवीक्षाधीन

अधिकारी अपनी-अपनी सेवाओं के अनुरूप संस्थागत प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए विभिन्न प्रशिक्षण संस्थाओं में चले जाते हैं, जबकि भारतीय प्रशासनिक सेवा के परिवीक्षाधीन अधिकारी अकादमी में ही संस्थागत प्रशिक्षण के अलगे पाठ्यक्रम में जुट जाते हैं।

1969 से सरकार ने भारतीय प्रशासनिक सेवा के लिए 'सेंडविच' पाठ्यक्रम कहे जाने वाले नए तरीके की शुरुआत की है। भारतीय प्रशासनिक सेवा में नवनियुक्त अधिकारी एक वर्ष के अंतराल में दो बार अकादमी में प्रशिक्षण पाते हैं। इस अंतराल में अधिकारी को बुनियादी पाठ्यक्रम करवाया जाता है। प्रशिक्षण के पहले दौर तथा बुनियादी पाठ्यक्रम के बाद अधिकारी को राज्य में (जिस राज्य का संवर्ग उसे मिला है) व्यावहारिक प्रशिक्षण के लिए भेज दिया जाता है। इस प्रशिक्षण के पूरा होने के बाद वह फिर दूसरे दौर में प्रशिक्षण के लिए अकादमी में भेजा जाता है। इस दौर के प्रशिक्षण में उन प्रशासनिक समस्याओं पर विचार-विमर्श पर ज़ोर दिया जाता है, जिनसे परिवीक्षाधीन अधिकारी राज्य में व्यावहारिक प्रशिक्षण के दौरान या तो गुज़रा है या उसने इन समस्याओं को महसूस किया है। इस तरह प्रशिक्षण का यह हिस्सा समस्याओं से ज्यादा जुड़ा है। प्रशिक्षण का दूसरा दौर समाप्त होने के बाद परिवीक्षाधीन भारतीय प्रशासनिक सेवा अधिकारी को संघ लोक सेवा आयोग की एक परीक्षा देनी होती है। इसके बाद उसे ज़िले के एक सब-डिवीज़न का कार्यभार देकर नियुक्ति की जाती है।

11.5.2 संवर्ग-प्रबंध

1970 तक सार्वजनिक सेवाओं का प्रबंध गृह मंत्रालय और वित्त मंत्रालय मिल-जुल कर देखते थे। गृह मंत्रालय वित्तीय मामलों को छोड़कर सेवा की सामान्य सेवा-शर्तें निर्धारित करता था, जबकि वित्त मंत्रालय वित्तीय मामलों से जुड़ी सेवा-शर्तों के निर्धारण के लिए पूरी तरह ज़िम्मेदार था। वित्त मंत्रालय विभिन्न मामलों के वित्तीय पक्ष को देखता था, जबकि गृह मंत्रालय सेवाओं के सामान्य काम-काज को सुचारू रूप से चलाए जाने संबंधी मामलों को देखता था।

गृह मंत्रालय, भारत सरकार का कार्मिक प्रबंध देखने वाली मुख्य एजेंसी जैसा था। यह अखिल भारतीय सेवाओं पर नियंत्रण रखता था। मंत्रालय विभिन्न सेवाओं में चयन, अनुशासन और सेवा शर्तों के समान स्तर को बनाए रखने क लिए, सभी सेवाओं पर समान रूप से लागू होने वाले मामलों की देख-रेख करता था। इसके अलावा गृह मंत्रालय निम्नलिखित मामलों को भी देखता थाः

i) विभिन्न सेवाओं में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षण को लागू करना

ii) विस्थापित तथा छंटनी (retrenched) किए गए तथा राष्ट्रीय आपात् स्थिति के समय सेना में भर्ती होने वाले कार्मिकों को पुनः रोज़गार देना

iii) सरकार तथा कर्मचारियों के बीच अनसुलझे मतभेदों के बारे में मिल-जुलकर विचार-विमर्श करना, इन मामलों की सुनवाई क लिए व्हिटले (Whitley) तंत्र की व्यवस्था करना

1970 के बाद (i) भारतीय प्रशासनिक सेवा और (ii) भारतीय वन सेवा के प्रबंध का काम गृह मंत्रालय के कार्मिक और प्रशासनिक सुधार विभाग (Department of Personnel and Administrative Reforms - DEP & AR) को सौंपा गया है, जबकि तीसरी अखिल भारतीय सेवा — भारतीय पुलिस सेवा का प्रबंध गृह मंत्रालय ही देखता है।

11.6 अखिल भारतीय सेवाओं की आवश्यकता

इन सेवाओं की आवश्यकता पर टिप्पणी करते हुए संविधान का मसौदा बनाने वाली समिति के अध्यक्ष श्री बी. आर. अम्बेडकर ने संविधान सभा के समक्ष अपने भाषण में कहा, ... "यह एक स्वीकृत तथ्य है कि हर देश के प्रशासनिक ढाँचे में कुछ ऐसे पद होते हैं जिन्हें प्रशासन का स्तर बनाए रखने की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण माना जा सकता है ... निस्संदेह, प्रशासन का स्तर इन पदों पर कार्यरत अधिकारियों के स्तर से आंका जा सकता है .... संविधान में व्यवस्था की गई है कि अखिल भारतीय सेवाओं के अधिकारी ही पूरे देश में इन महत्वपूर्ण पदों का कार्यभार संभालेंगे"। इस प्रकार, श्री अम्बेडकर ने संघ और राज्यों में प्रशासन में ज्यादा कुशलता लाने में इन सेवाओं के योगदान पर बल दिया। अन्य लोगों ने इन सेवाओं के पूरे देश को जोड़े रखने वाले पक्ष पर जोर देते हुए यह दावा किया कि ये सेवाएँ देश भर में प्रशासनिक प्रणाली की एकरूपता सुनिश्चित करेंगी। हम भारत में काफी हद तक इस प्रयोग को सफलता से चला सके हैं और इस तरह हमने, एक ओर, विघटनकारी तत्वों पर प्रभावी नियंत्रण तो किया ही है, दूसरी ओर, इन सेवाओं में कार्यरत अधिकारियों को ऐसा आकर्षक काम दे सके हैं, जो किसी अन्य सेवा में संभव नहीं है। सामान्य सांविधानिक तंत्र के विफल हो जाने पर राज्य के प्रशासन की जिम्मेदारी राष्ट्रपति की है। राज्य में अखिल भारतीय सेवाओं के कुछ अधिकारियों के महत्वपूर्ण प्रशासनिक पदों पर होने से राष्ट्रपति को निश्चय ही प्रशासन चलाने में मदद मिलेगी, क्योंकि अखिल भारतीय सेवाओं के अधिकारी मूलतः संघ सरकार के कर्मचारी हैं, इसलिए राष्ट्रपति राज्य सरकार के कर्मचारियों की तुलना में इन सेवाओं के कर्मचारियों पर ज्यादा सहयोग प्राप्त कर सकते हैं।

बोध प्रश्न 2

टिप्पणी : i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थानों का प्रयोग कीजिए।
ii) इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1) अखिल भारतीय सेवा के रूप में भारतीय प्रशासनिक सेवा के विशिष्ट लक्षण क्या हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) अखिल भारतीय सेवाओं में भर्ती के तरीके को संक्षेप में समझाइए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

3) अखिल भारतीय सेवाओं में नव-नियुक्त अधिकारियों को दिए जाने वाले प्रशिक्षण की विषयवस्तु में मुख्यतः किन बातों पर जोर दिया जाता है?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

4) भारतीय प्रशासनिक सेवा और भारतीय पुलिस सेवा की सेवा-शर्तों का प्रबंध कौन करता है?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

11.7 केन्द्रीय सेवाएँ

अखिल भारतीय सेवाओं के विपरीत केन्द्रीय सिविल सेवाएँ पूरी तरह केन्द्र सरकार के अधीन होती हैं। इसके अधिकारी केवल केन्द्र सरकार के पदों पर काम करते हैं। केन्द्र सरकार की सिविल सेवाओं में नियमित केन्द्रीय सिविल सेवाएँ तथा इसके अतिरिक्त ऐसे बाहरी सिविल पद होते हैं, जिन्हें मिलाकर इसे सामान्य केन्द्रीय सेवा कहते हैं। केन्द्रीय सिविल सेवाओं और अन्य सिविल पदों को चार श्रेणियों — प्रथम, द्वितीय, तृतीय तथा चतुर्थ — में बाँटा गया है।

अक्सर ऐसा कहा जाता है कि अखिल भारतीय और केन्द्रीय सेवाओं में नियुक्ति समान प्राधिकारी द्वारा की जाती है, अतः इन्हें दो भागों में बाँटने का कोई औचित्य नहीं है। हालाँकि नियोक्ता प्राधिकारी समान हैं, पर अखिल भारतीय और केन्द्रीय सेवाओं के बीच एक महत्वपूर्ण अंतर है। अखिल भारतीय सेवाओं के अधिकारी केन्द्र और राज्य दोनों सरकारों के अंतर्गत काम करते हैं। इसके अलावा, भारतीय प्रशासनिक सेवा के अधिकारी, ज़रूरत के अनुरूप, सामान्य निरीक्षण वाले किसी भी पद पर नियुक्त किए जा सकते हैं, जबकि केन्द्रीय सेवाओं के अधिकारी विशिष्ट, विशेषज्ञता वाले पदों पर ही नियुक्त किए जाते हैं। इस प्रकार, दोनों प्रकार की सेवाओं में अंतर बनाए रखना उचित ठहराया जा सकता है।

11.7.1 भर्ती

प्रथम और द्वितीय श्रेणी की केन्द्रीय सेवाओं में भर्ती संघ लोक सेवा आयोग द्वारा सम्मिलित अखिल भारतीय सिविल सेवा परीक्षा के आधार पर की जाती है।

11.7.2 प्रशिक्षण तथा संवर्ग-प्रबंध

केन्द्रीय सेवाओं में प्रथम श्रेणी के पदों के लिए चुने गए अधिकारियों को मसूरी स्थित लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय प्रशासनिक अकादमी तथा अन्य केन्द्रीय प्रशिक्षण संस्थानों में पाँच महीने का बुनियादी पाठ्यक्रम पूरा करना होता है। इसके बाद उन्हें अपनी-अपनी सेवाओं के अनुरूप अपने अपने अन्य संस्थानों में प्रशिक्षण के लिए भेजा जाता है। केन्द्रीय सेवाओं के अधिकारियों का काम एक तरह का और विशिष्ट होता है इसलिए अखिल भारतीय सेवाओं के विपरीत, इनके प्रशिक्षण कार्यक्रम में उस काम की प्रकृति पर स्पष्ट बल दिया जाता है, जिसे अधिकारी को आगे अपने कार्यकाल में करना होता है। केन्द्रीय सेवाओं के लिए चुने गए अधिकारी को प्रशिक्षण-अवधि के दौरान व्यावहारिक अर्थात् उसके कार्य क्षेत्र में ही प्रशिक्षण भी दिया जाता है। प्रशिक्षण की समाप्ति पर, परिवीक्षाधीन अधिकारी को एक विभागीय परीक्षा पास करनी होती है। इस परीक्षा के विषय उसके काम से सीधे संबंधित होते हैं। इसके बाद उसे पहली नियुक्ति दी जाती है। सभी केन्द्रीय सेवाओं के प्रशिक्षण का मूल स्वरूप एक जैसा होता है।

इन सेवाओं का रोज़मर्रा का प्रशासन वह मंत्रालय देखता है, जिसके अंतर्गत इन सेवाओं के पद होते हैं। कार्मिक विभाग इन सेवाओं की (प्रशासनिक प्रकृति की) सेवा-शर्तें निर्धारित करता है। वित्त मंत्रालय पदों के वेतनमान और अन्य वित्तीय पक्षों, जैसे वेतन निर्धारण, वेतन वृद्धि की मंजूरी, पेंशन, ग्रेच्युटी और भविष्य निधि में अंशदान जैसे मामलों को देखता है।

11.7.3 भारतीय विदेश सेवा

भारतीय विदेश सेवा — प्रथम श्रेणी की एक केन्द्रीय सिविल सेवा है। इसका गठन स्वतंत्रता के बाद किया गया। यह पूरी तरह केन्द्र सरकार के नियंत्रण में है और अखिल भारतीय सिविल सेवा परीक्षा के चोटी के सफल उम्मीदवारों को इस सेवा में नियुक्त किया जाता है। केन्द्रीय सिविल सेवाओं में इस सेवा को सर्वाधिक सम्मान, उच्च स्तर, वेतन तथा भत्ते मिलते हैं। इसके अधिकारियों को विदेशों में भारतीय मिशनों और दूतावासों में नियुक्त किया जाता है। इस सेवा का प्रबंध विदेश मंत्रालय देखता है। इसके प्रबंध में कार्मिक विभाग तथा वित्त मंत्रालय भी शामिल हैं। कार्मिक विभाग सेवा-शर्तों संबंधी मामले देखता है और वित्त मंत्रालय इस सेवा का वित्तीय पक्ष देखता है। इस सेवा के अधिकारियों को अन्य सेवाओं की तुलना में कहीं अधिक वेतन तथा भत्ते मिलते हैं। उन्हें विदेशी भत्ते मिलते हैं, जिन्हें निम्न बातों के आधार पर निर्धारित किया जाता है: (क) नियुक्ति वाले देश में जीवन-यापन के खर्च, (ख) भारत में उसी पद के अधिकारी को जो खर्चे अनिवार्य रूप से करने ही पड़ते हैं, चाहे वह देश में हो या विदेश में, (ग) प्रतिनिधिक व्यय (representational expenditure) अर्थात् ऐसे व्यय जो सामान्य व्यक्ति के लिए तो ऐच्छिक हो सकते हैं, पर विदेश सेवा के विदेश में कार्यरत व्यक्ति की अधिकारिक स्थिति के कारण उनके लिए अनिवार्य हो जाते हैं।

भारतीय विदेश सेवा के नवनियुक्त अधिकारी का प्रशिक्षण कार्यक्रम तीन वर्ष का होता है। कुछ समय उसे किसी ज़िले में व्यावहारिक काम का जायजा लेने के लिए वहाँ के अधिकारियों के साथ काम करना होता है। उसे सचिवालय के काम का भी कुछ समय प्रशिक्षण लेना होता है। इस सेवा के प्रशिक्षण कार्यक्रमों में भाषाओं (हिन्दी तथा एक विदेशी भाषा), और इस सेवा के काम-काज से संबंधित विषयों के अध्ययन पर ज्यादा ध्यान दिया जाता है।

बोध प्रश्न 3

टिप्पणी : i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थानों का प्रयोग कीजिए।

ii) इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1) केन्द्रीय सिविल सेवाएँ क्या हैं? अखिल भारतीय सेवाओं से ये किस प्रकार भिन्न हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) भारतीय विदेश सेवा को अन्य केन्द्रीय सेवाओं की अपेक्षा अधिक सुविधासम्पन्न क्यों माना जाता है?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

3) केन्द्रीय सिविल सेवाओं के प्रबंध का दायित्व किन एजेंसियों पर है?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

11.8 सारांश

इस इकाई में हमने निम्न बातों का अध्ययन किया:

- अखिल भारतीय सेवाओं का विकास
- अखिल भारतीय सेवाओं से संबंधित सांविधानिक व्यवस्थाएँ और उनकी आवश्यकता
- भारतीय पुलिस सेवा और भारतीय वन सेवा की विशेषताएँ
- भारतीय प्रशासनिक सेवा के मुख्य लक्षण तथा इसकी विशिष्टता
- अखिल भारतीय सेवाओं में अधिकारियों की भर्ती के तरीके तथा उनके प्रबंध के लिए ज़िम्मेदार एजेंसियाँ; और

- केन्द्रीय सेवाएँ, अखिल भारतीय सेवाओं और केन्द्रीय सेवाओं में अंतर, उनका वर्गीकरण, भर्ती, प्रशिक्षण तथा संवर्ग प्रबंध।

11.9 शब्दावली

ली आयोग : 1923 में लॉर्ड ली की अध्यक्षता में भारत में वरिष्ठ सिविल सेवाओं के बारे में गठित शाही आयोग। इसकी नियुक्ति भारत में सिविल सेवाओं के संगठन और इन सेवाओं के लिए यूरोपीय तथा भारतीय लोगें के चयन के तरीकों की समीक्षा करने के लिए की गई थी।

व्हिटले (Whitley) तंत्र : व्हिटले परिषदों की शुरूआत इंग्लैंड में प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान हुई। इनमें सरकार और कर्मचारियों के संगठन साथ मिल-बैठकर विभिन्न कार्मिक समस्याओं को सुलझाते हैं।

पंच फैसला (Arbitration) : किसी विवाद पर दोनों पक्षों द्वारा चुने गए अथवा दोनों पक्षों की सहमति वाले निष्पक्ष निर्णायक द्वारा सुनवाई और फैसला।

परिवीक्षाधीन अधिकारी (Probationer) : परीक्षण अवधि के दौरान काम कर रहा नवनियुक्त अधिकारी।

सेंडविच (Sandwich) पाठ्यक्रम : ऐसा सेवाकालीन प्रशिक्षण पाठ्यक्रम जिसमें अल्प समय के अध्ययन पाठ्यक्रम के अलावा व्यावहारिक (क्षेत्र संबंधी) प्रशिक्षण भी दिया जाता है।

11.10 संदर्भ एवं उपयोगी पुस्तकें

Bhambhri, C.P, 1976, *Public Administration in India*, Vikas Publishing House, New Delhi.

Jain, R.B, 1976, *Contemporary Issues in Indian Administration*, Visual Publications, Delhi.

Maheshwari, S.R, 1986, *Indian Administration*, Orient Longman, New Delhi.

Mehta, S.M, 1988, *Civil Servants and Administration*, Deep and Deep Publication, New Delhi.

Mishra R.B, 1986, *Government and Bureaucracy in India : 1947-1976*, Oxford Publishing House, New Delhi.

Sinha, V.M, 1985, *The Superior Civil Services in India*, The Institute for Research and Advanced Studies, Jaipur.

Bhattacharya, Mohit, 1987, *Public Administration: Shuchre, Process and Behawour* World Press, Kolkata.

11.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें होनी चाहिएः

- ली आयोग ने 1924 में कुछ अखिल भारतीय सेवाओं को समाप्त करने की सिफारिश की
- ली आयोग ने भारतीय सिविल सेवा (आई.सी.एस.), इंपीरियल पुलिस (आई.पी.), भारतीय चिकित्सा सेवा (आई.एम.एस.), भारतीय वन सेवा और भारतीय इंजीनियरिंग सेवा की सिंचाई शाखा को रखने की सिफारिश की
- भारत सरकार अधिनियम से सेवाओं की स्थिति में और परिवर्तन आए
- ब्रिटिश संसद की संयुक्त प्रवर समिति ने 1935 के अधिनियम का मसौदा तैयार किया और आई.सी.एस., आई.पी. और आई.एम.एस. (सिविल) सेवाओं को जारी रखने की सिफारिश की
- अक्टूबर, 1946 में सरदार पटेल ने पुरानी, आई.सी.एस. और आई.पी. के स्थान पर दो नई अखिल भारतीय सेवाओं — भारतीय प्रशासनिक सेवा (आई.ए.एस.) और भारतीय पुलिस सेवा (आई.पी.एस.) — के गठन के लिए प्रान्तीय सरकारों की सहमति प्राप्त की

2) आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें होनी चाहिएः

- संविधान के अनुच्छेद 312-2 में संसद को यह अधिकार दिया गया है कि वह जब भी राष्ट्रीय हित में ज़रूरी समझे, एक या अधिक अखिल भारतीय सेवाओं का गठन कर सकती है
- संसद ने अक्टूबर 1951 में भारतीय प्रशासनिक सेवा अधिनियम पारित किया
- अखिल भारतीय सेवाओं की सेवा-शर्तों को दो तरह के नियमों से निर्धारित किया जाता है — भारत मंत्री अथवा काउंसिल-सहित गवर्नर जनरल द्वारा बनाए गए नियम और 1951 के अधिनियम के अंतर्गत नियम

3) आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें होनी चाहिएः

- अखिल भारतीय सेवाएँ मूलतः संघ सरकार के नियंत्रण में होती हैं
- अखिल भारतीय सेवाएँ राज्य संवर्गों में बँटी होती हैं। हर राज्य संवर्ग के अधिकारी उस राज्य सरकार के सीधे नियंत्रण में होते हैं
- इन अधिकारियों को वेतन और पेंशन, संबंधित राज्य सरकारें देती हैं
- हर राज्य संवर्ग में अधिकारियों की संख्या का इस प्रकार निर्धारण किया ज़ाता है कि कुछ अधिकारियों को संघ सरकार में एक या अधिक अवधि के लिए प्रतिनियुक्त किया जा सके

4) उपभाग 11.4.1 और 11.4.2 देखिए

बोध प्रश्न 2

1) आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें होनी चाहिएः

- अधिकारियों का ऐसा सामान्य पूल बनाने से, जो पूरी तरह न तो संघ सरकार के न ही राज्य सरकार के नियंत्रण में होते हैं, लेकिन जो दोनों सरकारों में वरिष्ठ पदों पर होते हैं, केन्द्र और राज्यों के बीच सहयोग और तालमेल बना रहता है
- इससे भारतीय प्रशासनिक सेवा के अधिकारियों को सरकार के दोनों स्तरों की जानकारी मिल जाती है
- भारतीय प्रशासनिक सेवा में सर्वोत्तम प्रतिभाशाली अधिकारी आते हैं। इससे राज्यों को काफी संख्या में प्रतिभाशाली अधिकारी मिल जाते हैं

2) आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें होनी चाहिएः

- संघ लोक सेवा आयोग की प्रतियोगी परीक्षा के आधार पर भर्ती
- अखिल भारतीय और प्रथम और द्वितीय श्रेणी की केन्द्रीय सेवाओं के लिए सम्मिलित परीक्षा
- परीक्षा और साक्षात्कार का स्वरूप

3) उपभाग 11.6.1 देखिए

4) आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें होनी चाहिएः

- 1970 तक अखिल भारतीय सेवाओं के प्रबंध में गृह मंत्रालय और वित्त मंत्रालय की भूमिका
- 1970 से प्रबंध करने वाले विभाग के रूप में कार्मिक तथा प्रशासनिक सुधार विभाग की भूमिका

बोध प्रश्न 3

1) आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें होनी चाहिएः

- अखिल भारतीय सेवाओं के विपरीत, केन्द्रीय सिविल सेवाएँ केन्द्र सरकार के पूर्ण नियंत्रण में होती है
- इसके सदस्य अधिकारी केवल केन्द्र सरकार के पदों पर कार्य करते हैं
- अखिल भारतीय सेवाओं के अधिकारी — केन्द्र और राज्य सरकारों — दोनों के पदों पर काम कर सकते हैं
- भारतीय प्रशासनिक सेवा अधिकारी ज़रूरत पड़ने पर सामान्य काम-काज वाले किसी भी पद पर नियुक्त किए जा सकते हैं, जबकि केन्द्रीय सेवाओं के अधिकारी केवल विशिष्ट प्रकृति के कार्यों वाले पदों पर नियुक्त किए जा सकते हैं

2) आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें होनी चाहिएः

- इस सेवा के अधिकारी अखिल भारतीय सिविल सेवा परीक्षा के चोटी के कुछ सफल उम्मीदवारों में से नियुक्त किए जाते हैं

- यह केन्द्रीय सेवाओं में सर्वाधिक सम्मान, स्तर, वेतन और भत्तों वाली सेवा है। इसके अधिकारियों को विदेश में भारतीय मिशनों और दूतावासों में काम करना होता है
- इस सेवा के अधिकारियों को सभी सेवाओं से अधिक भत्ते मिलते हैं

3) आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें होनी चाहिए :

- इन सेवाओं का रोज़मर्रा का प्रशासन वह मंत्रालय देखता है, जिसके अंतर्गत इनके पद होते हैं।
- कार्मिक विभाग इन सेवाओं की प्रशासनिक किस्म की सेवा-शर्तें निर्धारित करता है
- वित्त मंत्रालय इन सेवाओं, वेतनमान और अन्य वित्तीय पक्ष जैसे वेतन-निर्धारण, वेतन-वृद्धि की मंजूरी, ग्रेच्युटी और भविष्य निधि में अंशदान जैसी बातों का निधार्रण करता है

इकाई 9 संघ लोक सेवा आयोग/चयन आयोग

इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य

9.1 प्रस्तावना

9.2 संघ लोक सेवा आयोग का उद्भव

- 9.2.1 भारत में लोक सेवा आयोगों का विकास
- 9.2.2 प्रथम काल - 1926-37 (भारत सरकार अधिनियम, 1919 और ली आयोग)
- 9.2.3 द्वितीय काल - 1937-50
- 9.2.4 तृतीय काल - 1950 से अब तक

9.3 संघ लोक सेवा आयोग का गठन

9.4 संघ लोक सेवा आयोग के कार्य

9.5 संघ लोक सेवा आयोग की सलाहकार भूमिका

9.6 सारांश

9.7 शब्दावली

9.8 संदर्भ एवं उपयोगी पुस्तकें

9.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

9.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप

- संघ लोक सेवा आयोग विगत वर्षों में जिस विकास क्रम से गुज़रकर अपने वर्तमान स्वरूप तक पहुँचा है, उसे स्पष्ट कर सकेंगे
- संघ लोक सेवा आयोग के संघटन, सदस्यों की नियुक्ति और सदस्यों की पदावधि के संदर्भ में उसके गठन पर विचार-विमर्श कर सकेंगे
- संघ लोक सेवा आयोग के विभिन्न प्रकार के कार्यों का वर्णन कर सकेंगे; और
- आयोग की सलाहकार भूमिका का विवेचनात्मक विश्लेषण कर सकेंगे।

9.1 प्रस्तावना

किसी भी देश में आधुनिक सरकार का काम उसकी प्रशासनिक एजेंसियों द्वारा चलाया जाता है। राज्य के कार्यों में अत्यधिक विस्तार हुआ है और इसके लिए सरकार की संगठनात्मक और प्रशासनिक क्षमता पर बहुत अधिक भरोसा किया जाता है। दुरुस्त प्रशासनिक संगठन, पद्धतियाँ और कार्यविधि, लोक हित के प्रति समर्पित सक्षम लोक सेवक आज के राज्य के कार्यों के उपयुक्त कार्य निष्पादन के लिए अनिवार्य अपेक्षाएँ हैं। जब सिविल कर्मचारी ऐसी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, विशेष तौर पर इन दिनों जब सरकार अत्यधिक उत्तरदायित्व उठा रही है, तो उनकी भर्ती, प्रशिक्षण, परिलब्धियों, सेवा-शर्तों,

पदोन्नति नीतियों आदि के संबंध में महत्वपूर्ण पहलुओं का और अधिक महत्व हो जाता है। सिविल कर्मचारियों संबंधी इन मामलों पर निष्पक्ष रूप से विचार करने के लिए एक स्वतंत्र और विशेषज्ञ प्राधिकरण — लोक सेवा आयोग की आवश्यकता पड़ती है।

भारत में हमारी सांविधानिक योजना में संघ लोक सेवा आयोग की महत्वपूर्ण स्थिति है और सरकार के साथ इसके संबंध जटिल हैं। यह सरकारी कर्मचारियों के सेवा संबंधी मामलों पर निष्पक्ष रूप से विचार करने के लिए एक स्वतंत्र सांविधानिक निकाय है। इसके पास महत्वपूर्ण सांविधानिक कार्य और कर्त्तव्य तो हैं ही, परन्तु इसकी भूमिका मात्र परामर्शी है, निर्णायक शक्तियाँ और प्राधिकार सरकार के पास हैं। लोकतांत्रिक प्रणाली में चयन आयोग को लोकतांत्रिक कर्मचारी के आदर्शों का पालन करते हुए एक दक्ष और किफायती प्रबंध और लोक सेवा के निर्माण की ओर प्रयास करना पड़ता है। एक कल्याणकारी राज्य में, जनता के प्रति सेवा का जो उद्देश्य होता है, उससे कार्मिक प्रशासन के कार्य में और जटिलताएँ पैदा हो जाती हैं। किसी प्रणाली की सफलता अथवा असफलता नापने का पैमाना है, उक्त उद्देश्यों की पूर्ति के लिए संगठन की कार्मिक प्रबंध में योग्यता।

9.2 संघ लोक सेवा आयोग का उद्भव

9.2.1 भारत में लोक सेवा आयोगों का विकास

आजकल सिविल कर्मचारियों की भर्ती संघ लोक सेवा आयोग (Union Public Service Commission – UPSC) द्वारा की जाती है। सिविल कर्मचारी की संज्ञा सबसे पहले ईस्ट इंडिया कम्पनी के उन कर्मचारियों को दी गई थी जो भारत में इसके वाणिज्यिक कार्यों के प्रशासन से संबंधित थे। ईस्ट इंडिया कम्पनी के कर्मचारी तब इंग्लैंड में इसके "कोर्ट ऑफ डायरेक्टर्स" (Court of Directors) द्वारा चुने जाते थे और भर्ती किए जाते थे। भर्ती के उद्देश्य से, पूर्वी व्यापार और वाणिज्यिक लेखाओं का प्राथमिक ज्ञान उम्मीदवारों की योग्यता माना जाता था, लेकिन कुल मिलाकार भर्ती प्रश्रय (patronage) के आधार पर की जाती थी। चूँकि नियुक्तियाँ निदेशकों द्वारा नामित व्यक्तियों के लिए पूर्णतः आरक्षित थीं, अतः इससे सेवाओं के लिए भर्ती में और अधिक भ्रष्ट तरीके इस्तेमाल होने लगे।

सबसे पहले 1833 में लार्ड ग्रेनविल ने, जो उस समय हाउस ऑफ लार्ड्स का प्रभावशाली सदस्य था, यह आवाज़ उठाई कि उम्मीदवारों की भर्ती निदेशकों द्वारा किए गए नामांकनों के बजाए, प्रतियोगिता के आधार पर होनी चाहिए। लेकिन 1853 तक इस दिशा में कोई प्रगति नहीं हुई। तथापि, ईस्ट इंडिया कम्पनी को प्रदत्त चार्टर अधिनियम में 1833 में एक खंड जोड़ा गया कि भविष्य में सिविल सेवा के लिए पात्रता का मानदंड उपयुक्तता होगी और जाति-पाति तथा रंग का कोई भेदभाव नहीं बरता जाएगा।

भारत में सिविल सेवाओं में नियुक्तियों के लिए नामांकन करने के संबंध में निदेशकों का अधिकार केवल अप्रैल, 1854 के अंत तक जारी रहने दिया गया। 1833 के अधिनियम को अमल में लाने के लिए क्या उपाय अपनाए जाएँ, इस विषय पर सलाह देने के लिए सर चार्ल्स वुड ने 1854 में लार्ड मैकाले की अध्यक्षता में एक समिति नियुक्त की और इससे, सिद्धान्त रूप में ही सही, भारतीय सिविल सेवा में नियुक्तियाँ, बिना किसी भेदभाव के, प्रतियोगिता के आधार पर होने लगीं। समिति ने सिफारिश की कि प्रत्याशियों का चयन प्रतियोगी परीक्षा के आधार पर होना चाहिए, उनकी अंतिम रूप से नियुक्ति से पहले परिवीक्षा अवधि होनी चाहिए और हेलीबरी का कॉलेज बंद कर देना चाहिए।

प्रतियोगी परीक्षा प्रणाली की पहली परीक्षा भारत में हुई और फिर धीरे-धीरे यह इंग्लैंड में भी अपनाई गई। लेकिन सेवाओं के भारतीयकरण की प्रक्रिया 1909 तक बहुत धीमी गति से चलती रही, जबकि मिंटो-मार्ले सुधार शुरू किए गए। लेकिन यह सुधार भारतीयों को संतुष्ट नहीं कर सके।

9.2.2 प्रथम काल 1926-37 (भारत सरकार अधिनियम, 1919 और ली आयोग)

भारत सरकार अधिनियम, 1919 तत्काली सेक्रेटरी ऑफ स्टेट लार्ड मांटेग्यू तथा तत्कालीन वायसराय और गवर्नर जनरल ऑफ इंडिया लॉर्ड चैम्सफोर्ड द्वारा प्रस्तुत संयुक्त रिपोर्ट पर आधारित था। यह भारत में लोक सेवा आयोग (Public Service Commission - PSC) की स्थापना की दिशा में पहला कदम था। इस अधिनियम में एक सक्षम और स्वतंत्र सिविल सेवा रखने के महत्व को मान्यता दी गई थी। इसकी राय थी कि बिना किसी राजनीतिक हस्तक्षेप के सिविल कर्मचारियों की किसी विशेषज्ञ निकाय द्वारा भर्ती करने की तथा ऐसे एक स्थायी कार्यालय की स्थापना की आवश्यकता है, जिसे सिविल कर्मचारियों के सेवा संबंधी मामलों के विनियमन का कार्य सौंपा जा सके। अधिनियम की धारा 96 (ग) में एक लोक सेवा आयोग गठित करने की व्यवस्था थी, जिसे भारत में लोक सेवाओं की भर्ती और नियंत्रण के संबंध में ऐसे कार्य करने थे, जो उसे सेक्रेटरी ऑफ स्टेट-इन-काउंसिल द्वारा बनाए गए नियमों द्वारा सौंपे गए थे। अधिनियम के निर्माताओं ने यह अवलोकन किया था कि भारत में लोक सेवा आयोग की स्थापना हो जाने पर भारतीय लोक सेवाओं में अपेक्षाकृत अधिक संख्या में आ सकेंगे और साथ ही सिविल कर्मचारियों की राजनीतिक हस्तक्षेप से सुरक्षा भी हो सकेगी।

अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार लोक सेवा आयोग की सदस्य संख्या, अध्यक्ष को मिलाकर, पाँच से अधिक नहीं हो सकती थी। प्रत्येक सदस्य अपने पद पर पाँच वर्ष तक रह सकता था और पुनः नियुक्ति के लिए पात्र था।

ली आयोग-1923

1923 में ब्रिटिश सरकार ने भारतीयों को प्रशासन की प्रत्येक शाखा के साथ सम्बद्ध स्थापित करने की अपनी घोषित नीति के अनुपालन में लॉर्ड ली की अध्यक्षता में एक आयोग गठित किया। इस आयोग को सेवाओं के संगठन और आम शर्तों तथा यूरोपीयों और भारतीयों, दोनों के लिए भर्ती के तरीकों की जाँच-पड़ताल करनी थी। चूँकि इसका संबंध मात्र वरिष्ठ सिविल सेवाओं से था, अतः इसे भारत में वरिष्ठ सिविल सेवाओं के संबंध में रॉयल कमीशन का नाम दिया गया।

आयोग की राय थी कि सरकार को अपनी जिम्मेदारियाँ निभाने की दिशा में सहायता प्रदान करने के लिए लोक सेवा आयोग की स्थापना आवश्यक थी। इसका विचार था कि लोक सेवा आयोग की स्थापना के संबंध में उसकी सिफारिश उस रिपोर्ट की "एक आधारभूत विशेषता" थी और सेवाओं के भविष्य के लिए उसके प्रस्तावों का "पूरी संरचना का अभिन्न और अनिवार्य अंग" थी।

अतः आयोग ने सुझाव दिया कि भारत सरकार अधिनियम, 1919 की व्यवस्था के अनुसार सांविधानिक लोक सेवा आयोग की स्थापना तुरन्त की जाए। इस लोक सेवा आयोग में पाँच सदस्य रखने का प्रस्ताव था। जहाँ तक सदस्यों की योग्यताओं का प्रश्न था, इसकी राय थी कि उनका कोई भी राजनीतिक संबंध नहीं होना चाहिए और उनमें से कम से कम दो सदस्यों के पास न्यायिक या कानूनी योग्यताएँ होनी चाहिए। वे पूर्णकालिक अधिकारी होने

चाहिए और उनकी परिलब्धियाँ किसी भी हालत में उच्च न्यायालय के जजों से कम नहीं होनी चाहिए। आयोग की सिफारिशों की एक अन्य महत्वपूर्ण विशेषता यह थी कि उन्होंने प्रान्तों के लिए ऐसे आयोगों का सुझाव नहीं दिया था और राय दी थी कि केन्द्र के लोक सेवा आयोग की विशेषज्ञता का उपयोग प्रान्तीय सरकार को भी करने दिया जाए।

लोक सेवा आयोग के कार्यों के संबंध में ली आयोग की राय थी कि ये कार्य दो प्रकार के हो सकते हैं। पहला कार्य था, लोक सेवा के लिए कार्मिकों की भर्ती और लोक सेवाओं में नियुक्ति के लिए योग्यता के उपयुक्त मानक बनाए रखना। दूसरा कार्य अर्द्ध-न्यायिक था और वह था सेवाओं का अनुशासनिक नियंत्रण और संरक्षण।

फिर भी, ली आयोग की सिफारिशें लगभग दो वर्ष तक आस्थगित रही और फरवरी 1926 में सेक्रे ऑफ स्टेट ने एक लोक सेवा आयोग गठित करने का निर्णय लिया। इसका एक अध्य चार अन्य सदस्य थे। आयोग ने 1 अक्टूबर, 1926 से काम करना शुरू किया। इसे अखिल भारतीय सेवाओं, केन्द्रीय सेवा प्रथम श्रेणी या द्वितीय श्रेणी में भर्ती से संबंधित सभी विषयों पर गवर्नर जनरल-इन काउंसिल को सलाह देनी थी। आयोग को सौंपे गए कार्य मात्र परामर्शी स्वरूप के थे। ली आयोग चाहता था कि जहाँ तक भारत में सेवाओं में भर्ती का संबंध है, लोक सेवा आयोग का प्राधिकार अंतिम होना चाहिए। लेकिन तब भारत सरकार ने उसकी सिफारिशों पर कोई ध्यान नहीं दिया और इसलिए लोक सेवा आयोग को केवल परामर्शी शा यों सहित गठित किया गया।

भारत में विभिन्न हितों के प्रतिनिधियों और ब्रिटेन के प्रतिनिधियों को सेवाओं तथा लोक सेवा आयोगों के संबंध में एक सहमत योजना तैयार करने के लिए अवसर प्रदान करने के लिए लंदन में 1930 में पहली गोलमेज कांफ्रेंस हुई। इसमें एक प्रस्ताव रखा गया कि, 'प्रत्येक प्रान्त में और केन्द्र सरकार के संबंध में, यथास्थिति, गवर्नर अथवा गवर्नर जनरल द्वारा एक सांविधानिक लोक सेवा आयोग नियुक्त किया जाएगा।' (भारतीय गोलमेज कांफ्रेंस, 12 नवंबर, 1930 - 19 जनवरी, 1931 की कार्यवाही)। श्रृंखला संख्या-8 पर उपसमिति की रिपोर्ट (लंदन, 1931, पृष्ठ 67)

ब्रिटिश सरकार के जो सांविधानिक प्रस्ताव 15 मार्च, 1933 को प्रकाशित हुए थे, उनमें भी व्यवस्था थी कि फेडरल लोक सेवा आयोग के साथ-साथ प्रान्तों में भी लोक सेवा आयोग गठित किए जाए।

भारतीय सांविधानिक सुधारों पर संयुक्त समिति (1933-34) भी ऐसे प्रस्तावों पर सहमत थी और उसने भी सारे भारत के लिए एक से अधिक लोक सेवा आयोग गठित करने की आवश्यकता को स्वीकार किया था।

9.2.3 द्वितीय काल - 1937-50

भारतीय लोक सेवा आयोग के 1930-36 के दौरान के काम-काज से पता चलता है कि यह आयोग एक शक्तिशाली कार्मिक एजेंसी नहीं बन सका। यह कार्यपालिका से स्वतंत्र नहीं था। भारत सरकार अधिनियम, 1935, जिसके अंतर्गत प्रान्त पूर्णतया उत्तरदायी बन गए थे, ने सिविल सेवा आयोग की ड्यूटियों का सांविधानिक प्राधिकार बढ़ा दिया था। इस अधिनियम के 1937 में लागू होने से लोक सेवा आयोग का नाम फेडरल लोक सेवा आयोग रख दिया गया। इसमें यह भी व्यवस्था थी कि प्रान्त भी अपने-अपने लोक सेवा आयोग गठित करें।

इस आयोग के अध्यक्ष और अन्य सदस्यों की नियुक्ति गवर्नर जनरल द्वारा की जानी थी। आयोग के सदस्यों की संख्या, उनकी पदावधि, सेवा-शर्तें आदि गवर्नर जनरल द्वारा तय की जानी थी। एक अपेक्षा यह भी थी कि आयोग के कम से कम आधे सदस्य ऐसे होने चाहिए

जिन्होंने भारत में ब्रिटिश शासन (Crown) के अधीन कम से कम दस वर्ष तक पद संभाला हो।

फेडरल लोक सेवा आयोग के कार्य और उत्तरदायित्व भारत सरकार अधिनियम, 1935 की धारा 266 में भी निर्धारित किए गए थे। उनमें से अनेक कार्यों और उत्तरदायित्वों को बाद में भारत के संविधान में भी शामिल किया गया था। यह पहला अवसर था जब ऐसे कार्यों को सांविधानिक मंजूरी दी गई। आयोग को सेवाओं में नियुक्ति के लिए परीक्षाएँ लेनी थीं। इसे निम्नलिखित मामलों में सरकार को सलाह भी देनी थी:

क) सिविल सेवाओं और सिविल पदों के लिए भर्ती के तरीकों से संबंधित सभी मामले

ख) सिविल सेवाओं और सिविल पदों पर नियुक्तियाँ करने तथा पदोन्नतियाँ करने और एक सेवा से दूसरी सेवा में अंतरण करने व ऐसी नियुक्ति, पदोन्नति अथवा अन्तरण के लिए उम्मीदवार की उपयुक्तता के संबंध में मामले

ग) सिविल कर्मचारी की हैसियत से सेवारत व्यक्ति से संबंधित सभी अनुशासनिक मामले

घ) किसी सरकारी कर्मचारी द्वारा उसकी ड्यूटियों के निष्पादन में किए गए कार्यों के खिलाफ, यदि कोई कानूनी कार्यवाही की जाती है तो उसमें अपने बचाव के लिए किए गए व्ययों की प्रतिपूर्ति के लिए दावों से संबंधित मामले, और

ङ) सिविल कर्मचारी की हैसियत में किसी सरकारी कर्मचारी को पहुँची क्षति के लिए पेंशन प्रदान करने संबंधी मामले; तथा गवर्नर जनरल द्वारा आयोग को भेजे गए कोई अन्य मामले।

9.2.4 तृतीय काल - 1950 से अब तक

फेडरल लोक सेवा आयोग अपने वर्तमान रूप में 1947 से 1950 के बीच काम करता रहा। 26 जनवरी 1950 को जब भारत का संविधान लागू हुआ तो इसका स्थान अंतिम रूप से संघ लोक सेवा आयोग ने ले लिया।

भारत की स्वाधीनता कुछ दृष्टियों से संघ लोक सेवा आयोग के लिए एक नए युग का सूत्रपात हुआ। भारतीय संविधान के निर्माताओं ने संघ लोक सेवा आयोग को न्यायपालिका तथा नियंत्रक और महालेखा परीक्षक के साथ-साथ लोकतंत्र को दृढ़ बनाने का साधन समझा। अतः उन्होंने इसे न केवल सांविधानिक हैसियत ही दी, बल्कि इसकी स्वतंत्रता के बचाव के लिए विस्तृत उपायों की भी व्यवस्था की ताकि यह कर्मचारियों के चयन की योग्यता पद्धति का हित प्रहरी हो सके।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थानों का प्रयोग कीजिए।
ii) इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1) ली आयोग की महत्वपूर्ण सिफारिशें क्या थीं?

.....

.....

.....

.....

.....

2) भारत में पहले लोक सेवा आयोग की स्थापना किस वर्ष में हुई:

   क) 1919

   ख) 1937

   ग) 1926

   घ) 1909

3) फेडरल लोक सेवा आयोग के भारत सरकार अधिनियम, 1935 में यथा निर्धारित कार्यों का वर्णन कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

9.3 संघ लोक सेवा आयोग का गठन

भारत के संविधान में लोक सेवा आयोगों के तीन वर्गों पर विचार किया है। संघ लोक सेवा आयोग संघ सरकार की सेवाओं संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति करेगा, एक संयुक्त लोक सेवा आयोग दो या अधिक राज्यों की और राज्य लोक सेवा आयोग एक राज्य की सेवाओं संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति करेगा। संघ लोक सेवा आयोग और राज्य लोक सेवा आयोग (State Public Service Commissions – SPSCs) तो सांविधानिक निकाय हैं, परन्तु संयुक्त लोक सेवा आयोग का निर्माण संसद के अधिनियम द्वारा ही हो सकता है।

गठन, सदस्यों की नियुक्ति और पदावधि

संघ लोक सेवा आयोग में एक अध्यक्ष और अन्य सदस्य होते हैं। लोक सेवा आयोग (संघ अथवा संयुक्त) का अध्यक्ष अन्य सदस्य, राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त किए जाते हैं और राज्य आयोग के मामले में उस राज्य के राज्यपाल द्वारा नियुक्त किए जाते हैं। संविधान में आयोग के सदस्यों की संख्या नियत नहीं की गई है और संख्या नियत करने का कार्य राष्ट्रपति पर छोड़ दिया गया है। सदस्यों की संख्या आजकल 8 है। आयोग के आधे सदस्य ऐसे होने चाहिए जिन्होंने भारत सरकार अथवा किसी राज्य सरकार के अधीन कम से कम 10 वर्ष तक किसी न किसी पद पर कार्य किया हो।

संघ लोक सेवा आयोग का अध्यक्ष और सदस्य छः वर्ष की अवधि के लिए अथवा जब तक वे 65 वर्ष के नहीं हो जाते (इनमें से जो भी पहले हो), तब तक के लिए पद संभालते हैं। लेकिन किसी सदस्य का पद पहले भी समाप्त हो सकता है यदि (i) वह राष्ट्रपति को अपना त्याग-पत्र लिखित में भेज दें, अथवा (ii) राष्ट्रपति उसे उसके पद से हटा दें।

राष्ट्रपति किसी सदस्य को उसके पद से तब हटा सकते हैं जब वह दिवालिया घोषित हो जाए या अपने पद की ड्यूटियों से भिन्न कोई लाभप्रद रोज़गार अपना ले या राष्ट्रपति की राय में वह शरीर या बुद्धि से अशक्त हो। वह किसी अन्य आधार पर अपने पद से नहीं हटाया जा सकता। सिवाय इसके कि जब उच्चतम न्यायालय राष्ट्रपति द्वारा भेजे गए किसी संदर्भ

में उसे कदाचार का सिद्ध दोषी पाए। शब्द 'कदाचार' को संविधान में स्पष्ट कर दिया गया है। कोई सदस्य कदाचार का दोषी तब माना जाएगा जब (i) वह भारत सरकार या किसी राज्य सरकार की ओर से किए गए किसी करार या संविदा में उसका हित लाभ हो या वह उससे संबंधित हो अथवा (ii) वह किसी निगमित कम्पनी के अन्य सदस्यों के साथ मिलकर ऐसे करार (contract) अथवा संविदा में किसी भी रूप से लाभ का भागीदार हो।

9.4 संघ लोक सेवा आयोग के कार्य

संघ लोक सेवा आयोग के जो कार्य संविधान में अनुच्छेद 320 के अंतर्गत विनिर्दिष्ट किए गए हैं, वे वही हैं जो भारत सरकार अधिनियम, 1935 में फेडरल लोक सेवा आयोग के लिए विनिर्दिष्ट किए गए थे।

इन कार्यों को मोटे तौर पर तीन वर्गों में बाँटा जा सकता है — यथा (1) नियामक; (2) कार्यपालक; (3) अर्द्ध-न्यायिक।

1) **नियामक:** नियामक कार्यों में संघ लोक सेवा आयोग सरकार को निम्नलिखित से संबंधित मामलों में सलाह देता है — (i) भर्ती के तरीके; और (ii) नियुक्तियाँ, पदोन्नतियाँ तथा एक सेवा में दूसरी सेवा में अन्तरण करने के लिए अपनाए जाने वाले सिद्धान्त। फिर भी, संयुक्त राज्य अमेरिका के लोक सेवा आयोग (United States of America's Civil Service Commission) को जिस प्रकार का नियामक अधिकार क्षेत्र मिला हुआ है, भारत में संघ लोक सेवा आयोग को ऐसी कोई शक्तियाँ नहीं मिली हैं। संघ लोक सेवा आयोग का कार्य-क्षेत्र मात्र परामर्शी है। संविधान के अनुच्छेद 320 (3) में केवल यह उल्लेख है कि यह आयोग का कर्त्तव्य है कि वह सरकार को सिविल सेवा में भर्ती की पद्धतियों, पदोन्नतियों और अन्तरणों से संबंधित सभी मामलों में सलाह दें। इस प्रकार संयुक्त राज्य अमेरिका के लोक सेवा आयोग से भिन्नता रखता हुए संघ लोक सेवा आयोग कार्मिक मामलों में ऐसे विनिमय नहीं बना सकता जो कि सभी सरकारी विभागों के लिए बाध्यकर हों। यद्यपि संघ लोक सेवा आयोग के कुछ कार्यों को प्रायः नियामक कार्य कहा जाता है, परन्तु वास्तव में वह कार्य भी मात्र सलाहकारी कार्य ही है।

2) **कार्यपालक कार्य:** आयोग का एक विशिष्ट सांविधानिक कर्त्तव्य है कि वह संघ की सेवाओं में नियुक्तियों के लिए परीक्षाएँ ले। इस प्रावधान के अधीन संघ लोक सेवा आयोग प्रति वर्ष विभिन्न वर्गों के पदों के लिए अनेक लिखित परीक्षाएँ लेता है। साथ ही विशिष्ट और अन्य वर्गों के पदों के लिए उम्मीदवारों का चयन करने के लिए साक्षात्कार भी आयोजित किए जाते हैं। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि आयोग का कार्य-क्षेत्र राजपत्रित अधिकारियों तक ही सीमित रखा गया है, जिनकी संख्या सरकारी कर्मचारियों की कुल संख्या की तुलना में बहुत कम है। इसका अर्थ यह हुआ कि आयोग का कार्यपालक कार्य-क्षेत्र केन्द्र सरकार के कुल कर्मचारियों के 1.9 प्रतिशत कर्मचारियों पर ही लागू होता है।

   संघ लोक सेवा आयोग का दूसरा कार्यपालक कार्य है, राष्ट्रपति को प्रति वर्ष आयोग द्वारा पिछले वर्ष के दौरान किए गए कार्य की रिपोर्ट प्रस्तुत करना। राष्ट्रपति यह रिपोर्ट, एक ऐसे ज्ञापन के साथ सदन के दोनों सदनों के समक्ष रखते हैं जिसमें उन मामलों को स्पष्ट किया जाता है, जिनमें आयोग की सलाह नहीं मानी गई थी और साथ ही न मानने के कारण भी दिए जाते हैं।

3) **अर्द्ध-न्यायिक कार्य:** संघ लोक सेवा आयोग की अर्द्ध-न्यायिक अधिकार क्षेत्र और विस्तार दोनों दृष्टियों से सीमित है। वास्तव में, इसको कोई सचमुच के अपीली अधिकार नहीं है। कर्मचारियों के विरुद्ध की गई अनुशासनिक कार्रवाइयों पर यह केवल सलाह दे सकता है। संविधान के अनुसार, सरकार को निम्नलिखित मामलों में आयोग की सलाह लेनी चाहिए:

   i) सरकारी कर्मचारी के संबंध में, परिनिन्दा, वेतन वृद्धि अथवा पदोन्नति रोकना, निम्न ग्रेड में पदावनत करना, अनिवार्य सेवा-निवृत्ति, सेवा से हटाना अथवा पदच्युत करना आदि जैसी अनुशासनिक कार्रवाइयाँ

   ii) किसी कर्मचारी द्वारा अपनी ड्यूटी के निष्पादन में किए गए कार्यों के संबंध में उसके खिलाफ की गई कानूनी कार्यवाही में उस कर्मचारी द्वारा किए गए खर्च की प्रतिपूर्ति के दावे; और

   iii) किसी कर्मचारी को पहुँची क्षति के संबंध में पेंशन देने के दावे और ऐसी पेंशन की राशि के संबंध में सभी प्रश्न (भारत का संविधान, अनुच्छेद 320 (3)(ग))

संघ लोक सेवा आयोग के जो कार्य निर्धारित किए गए हैं, वे जैसा ऊपर बताया गया है, भारत के संविधान से तो लिए ही गए हैं, साथ ही अन्य स्रोतों से भी लिए जाते हैं जैसे (क) संसद द्वारा बनाए गए कानून; (ख) कार्यपालिका के नियम, विनियम और आदेश, (ग) परिपाटियाँ (conventions)।

संविधान के अनुच्छेद 321 के अंतर्गत, संसद कानून बनाकर संघ लोक सेवा आयोग को संघ अथवा राज्यों की सेवाओं के संबंध में अतिरिक्त कार्य भी सौंप सकती है। आवश्यकता पड़ने पर, संसद किसी भी स्थानीय निकाय, निगमित निकाय अथवा लोक संस्था की कार्मिक पद्धति को आयोग के अधिकार के क्षेत्र में रख सकती है।

संविधान के अनुच्छेद 318 और 320 के अनुसार, केन्द्र सरकार कुछ विनियमों और आदेशों के माध्यम से आयोग को कुछ कार्य सौंप सकती है। साथ ही राष्ट्रपति भी, समय-समय पर विनियमों के माध्यम से उन मामलों को भी परिनिश्चित कर सकते हैं जिनमें आयोग की सलाह आवश्यक नहीं होती।

आयोग कुछ ऐसे कार्य भी करता है जो परिपाटियों के माध्यम से उसे सौंपे गए हैं, यद्यपि संविधान में इनकी व्याख्या नहीं है। संविधान के अधीन रक्षा सेनाओं के लिए भर्ती का कार्य आयोग के अधिकार क्षेत्र में नहीं है, क्योंकि रक्षा सेवाएँ सिविल सेवाओं का अंग नहीं है। लेकिन 1948 से आयोग केडेटों के चयन के लिए लिखित परीक्षा ले रहा है, जो अब एक नियमित कार्यकलाप बन गया है। इसी प्रकार संघ लोक सेवा आयोग उच्च योग्यता प्राप्त वैज्ञानिकों तथा प्रौद्योगविदों के पूल के लिए वैज्ञानिकों तथा तकनीशियनों का चयन करता है, जो केन्द्र सरकार, वैज्ञानिक संस्थानों, राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं, विश्वविद्यालयों आदि में प्रतिनियुक्त किए जाते हैं। यह कार्य संघ लोक सेवा आयोग द्वारा केवल परिपाटियों के आधार पर किए जा रहे हैं।

संघ लोक सेवा आयोग के कार्यों की सीमाएँ

कुछ ऐसे मामले हैं जो संघ लोक सेवा आयोग के कार्यक्षेत्र में नहीं आते हैं। वे इस प्रकार हैं:

क) भारत के संविधान में अनुच्छेद 335 के अंतर्गत व्यवस्था है कि विभिन्न पदों की नियुक्ति के मामलों में सरकार अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के दावों पर भी विचार करेगी। अनुच्छेद 320 (4) के अनुसार, अनुसूचित जातियों तथा

अनुसूचित जनजातियों के उम्मीदवारों के लिए आरक्षणों की सीमा निर्धारित करने के संबंध में संघ लोक सेवा आयोग की सलाह लेना आवश्यक नहीं है। लेकिन एक बार ऐसी शर्तें निर्धारित हो जाने के बाद, आयोग, एक भर्ती एजेंसी के रूप में, चयन की कार्य पद्धति शुरू कर देता है।

ख) राष्ट्रपति को यह अधिकार दिया गया है कि वह ऐसे विनिमय बना सकता है जिनसे कुछ मामले संघ लोक सेवा आयोग की सलाह के कार्य क्षेत्र से बाहर रखे जा सकते हैं। ऐसे सभी विनियमों को अनुमोदन के लिए अधिक से अधिक चौदह दिनों की अवधि के लिए संसद के दोनों सदनों में रखा जाना अनिवार्य है। संसद, यदि आवश्यक समझे तो, इनमें संशोधन कर सकती हैं अथवा इन्हें रद्द कर सकती है।

जिन पदों की भर्ती के लिए संघ लोक सेवा आयोग की सलाह आवश्यक नहीं है, वे हैं: अभिकरणों, आयोगों, उच्च-अधिकार प्राप्त समितियों के सदस्यों अथवा अध्यक्षों के पद, उच्च तकनीकी अथवा प्रशासनिक पद, ऐसी अस्थायी रिक्तियाँ भरना जहाँ नियुक्तियाँ एक वर्ष से कम अवधि के लिए की जाती हैं।

9.5 संघ लोक सेवा आयोग की सलाहकार भूमिका

यद्यपि आयोग को महत्वपूर्ण सांविधानिक ड्यूटियाँ और कार्य सौंपे गए हैं, फिर भी इसकी भूमिका मात्र सलाहकार और परामर्शी की है। भारत सरकार अधिनियम, 1935 के अंतर्गत फेडरल लोक सेवा आयोग की भूमिका भी परामर्शी ही थी। उस समय यह विचार किया गया था कि यदि आयोग को अधिक अधिकार दिए गए तो इससे कार्यपालिका की शक्तियों के साथ हस्तक्षेप हो सकता है। संघ लोक सेवा आयोग का कार्य सरकार को केवल मात्र सलाह देना है और कार्यपालिका इसकी सलाह मानने के लिए कानूनी तौर पर बाध्य नहीं है।

जो मूलभूत प्रश्न उठाया जाता है, वह यह है कि क्या आयोग इस परामर्शी भूमिका के साथ अपने कार्यों को कारगर तरीके से निभा सकता है। अतः समस्या यह है कि क्या सीमित परामर्शी भूमिका के साथ गठित कोई आयोग, यदि उसे कारगर तरीके से काम करना है, जनता तथा सेवाओं का विश्वास आवश्यक सीमा तक प्राप्त कर सकता है। लेकिन एक दृष्टिकोण यह भी है कि संघ लोक सेवा आयोग की भूमिका परामर्शी होनी चाहिए। इस प्रश्न पर संविधान सभा में भी वाद-विवाद हुआ था और संविधान के निर्माताओं ने आयोग को परामर्शी भूमिका ही दी थी।

यह समझा जा सकता है कि संविधान के अधीन, कुछ ऐसे मामले हैं जिन पर सरकार आयोग की सलाह लेने के लिए बाध्य है। इस प्रावधान का उल्लंघन असांविधानिक माना जाएगा। लेकिन सरकार आयोग की सलाह स्वीकार करने के लिए बाध्य नहीं है। साथ ही संविधान में एक नया अनुच्छेद 323 जोड़कर आयोग की सलाह स्वीकार न करने पर एक सांविधानिक अवरोध लगा दिया गया है। जिन मामलों में आयोग की सलाह स्वीकार नहीं की जाती है, उन मामलों में इस अनुच्छेद की अपेक्षाओं के अनुसार, सरकार को संसद के समक्ष एक ज्ञापन प्रस्तुत करना होता है जिसमें सलाह स्वीकार न करने के कारण बताए जाते हैं। साथ ही, आयोग की सलाह पर, कार्यवाही करने के लिए मंत्रालय अथवा विभाग की शक्तियाँ सोच-समझकर इस तरह सीमित कर दी गई है कि वे आयोग तब तक अस्वीकार नहीं कर सकते जब तक मंत्रिमंडल की नियुक्ति समिति का अनुमोदन प्राप्त न हो जाए। आयोग की सलाह के खिलाफ कोई भी प्रशासनिक विभाग तब तक कार्रवाई नहीं कर सकता जब तक कि उसे समिति की सहमति प्राप्त न हो जाए। इन आंतरिक और बाध्य प्रतिबंधों के कारण, आयोग की सलाह स्वीकार न करने के मामलों की संख्या नगण्य रही है।

बोध प्रश्न 2

टिप्पणी: i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थानों का प्रयोग कीजिए।

ii) इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1) संघ लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष तथा सदस्यों की नियुक्ति इनमें से कौन करता है?

क) प्रधानमंत्री

ख) भारत के मुख्य न्यायाधीश

ग) राष्ट्रपति

घ) संसद

2) संघ लोक सेवा आयोग के कार्यपालक कार्य क्या हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

3) आयोग की सलाह स्वीकार न करने के मामलों में प्रशासनिक विभागों पर कौन-कौन से सांविधानिक प्रतिबंध लगाए गए हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

9.6 सारांश

संघ लोक सेवा आयोग एक स्वतंत्र संस्था है, जो कार्मिक प्रशासन के मामलों में सरकार के एक निष्पक्ष और सुविज्ञ परामर्शदाता की महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसका हमारी कार्य पद्धति में एक महत्वपूर्ण स्थान है और यह एक दक्ष और निष्पक्ष लोक सेवा बनने में सरकार की सहायता करता है। भारत में, भारत सरकार अधिनियम, 1919 द्वारा पहली बार एक लोक सेवा आयोग स्थापित करने की व्यवस्था की गई थी जिसका बाद में 1923 में ली आयोग ने दृढ़ता से समर्थन किया था। अंततः 1926 में, लोक सेवा आयोग, मुख्यतः परामर्शी शक्तियों के साथ, गठित किया गया था।

भारत सरकार अधिनियम, 1935 में फेडरल लोक सेवा आयोग के कार्य स्पष्टतः निर्दिष्ट किए गए थे और इन्हीं में से अधिकतर बाद में भारत के संविधान में शामिल कर लिए गए। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद, 1950 में संघ लोक सेवा आयोग ने फेडरल लोक सेवा आयोग का स्थान ले लिया और संघ लोक सेवा आयोग को सांविधानिक हैसियत प्रदान की गई।

संविधान के अनुच्छेद 320 में संघ लोक सेवा आयोग के कार्य विनिर्दिष्ट किए गए हैं जो मोटे तौर पर तीन प्रकार के हैं — नियामक, कार्यपालक और अर्द्ध-न्यायिक। इसके कार्य, संविधान के अलावा, संसद द्वारा बनाए गए कानूनों द्वारा, कार्यपालक के नियमों, विनियमों, आदेशों द्वारा और परिपाटियों द्वारा निर्धारित किए जाते हैं।

संविधान ने विभाग को केवल परामर्शी शक्तियाँ ही प्रदान की है। यद्यपि सरकार आयोग द्वारा दी गई सलाह मानने के लिए बाध्य नहीं है, फिर भी सलाह न मानने के मामलों के संबंध में संसद के समक्ष एक स्पष्टीकरण ज्ञापन प्रस्तुत करना अनिवार्य है।

आयोग का कार्य, राजनीतिक दबावों से प्रभावित हुए बिना निर्बाध और कारगर रूप से चल सके, यह सुनिश्चित करने के लिए संविधान के निर्माताओं ने सभी संभव उपाय किए हैं। लोकतंत्र में, लोक सेवाओं की निष्पक्षता बहुत महत्वपूर्ण है, जो तभी सुनिश्चित की जा सकती है, जब आयोग स्वतंत्र रूप से कार्य करें।

9.7 शब्दावली

परिनिंदा : त्रुटियों, न्यूनताओं को परिलक्षित कराने वाली टिप्पणी

प्रश्रय : किसी पर अनुग्रह करके नियुक्ति करने का तरीका

9.8 संदर्भ एवं उपयोगी पुस्तकें

Bhale Rao, C.N, 1966, *Public Service Commissions of India: A Study*, Sterling Publishers, Delhi.

Jain R.B, 1967, *A Comparative Study of the United States Civil Service Commission and the UPSC in India*, (Ph.D. Thesis, Indian School of International Studies).

Muttalib, M.A, 1967, *The Union Public Service Commission*, IIPA, New Delhi.

Pai Panandiker, V.A, 1966, *Personnel System for Development Administration*, Bombay.

Sinha, V.M, 1986, *Personal Administration, Concepts and Comparative Perspective*, R.B.S.A. Publishers, Jaipur.

9.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें होनी चाहिए:

- 1923 में ली आयोग के गठन के मुख्य उद्देश्य
- लोक सेवा आयोग की स्थापना
- सदस्यता, सदस्यों की योग्यता
- आयोग के कार्य

2) (ग)

3) उपभाग 9.2.3 देखिए

बोध प्रश्न 2

1) (ग)

2) उप भाग 9.4 देखिए

3) आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें होनी चाहिए:

- संविधान के अनुच्छेद 323 के प्रावधान
- आयोग की सिफारिशें न मानने के मामलों में नियुक्ति समिति की सहमति

इकाई 8 प्रधानमंत्री कार्यालय और मंत्रिमंडल सचिवालय

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 प्रधानमंत्री की शक्तियाँ और कार्य

8.3 प्रधानमंत्री की सांस्थानिक सहायता

8.4 प्रधानमंत्री कार्यालय का विकास

8.4.1 संगठन

8.4.2 कार्य

8.5 प्रधानमंत्री कार्यालय की बदलती हुई भूमिका

8.6 मंत्रिमंडल सचिवालय

8.6.1 भारत में मंत्रिमंडल सचिवालय की स्थापना

8.6.2 संगठन और कार्य

8.7 मंत्रिमंडल सचिव की भूमिका

8.8 मंत्रिमंडल समितियाँ

8.8.1 आकार

8.8.2 कार्य और भूमिका

8.9 सारांश

8.10 शब्दावली

8.11 संदर्भ एवं उपयोगी पुस्तकें

8.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

8.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप

- प्रधानमंत्री के सार्वजनिक कार्यों और सरकारी कार्यों में उनको सांस्थानिक सहायता प्रदान करने में प्रधानमंत्री कार्यालय के ढाँचे, बदलती हुई भूमिका, कार्य और महत्व स्पष्ट कर सकेंगे
- भारत में मंत्रिमंडल सचिवालय के विकास और उसके संगठन और कार्यों की व्याख्या कर सकेंगे; और
- मंत्रिमंडल सचिव और मंत्रिमंडल समितियों की भूमिका और इनके कार्यों की विवेचना कर सकेंगे।

8.1 प्रस्तावना

भारतीय संविधान की सर्वाधिक महत्वपूर्ण विशेषता उसकी संसदीय शासन प्रणाली है। यह मूलभूत संगठनात्मक ढाँचा प्रदान करती है जिसमें सार्वजनिक नीतियाँ बनाई जाती हैं। आवश्यक रूप से इस शासन प्रणाली का अर्थ है: (i) दलीय आधार पर सीधे लोगों द्वारा प्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित संसद, (ii) राष्ट्रपति को सलाह देने तथा सहायता करने के लिए प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में मंत्रिपरिषद् होता है। राष्ट्रपति मंत्रिपरिषद् की सलाह के अनुसार कार्य करता है। वास्तविक कार्यपालक प्रधानमंत्री और उसका मंत्रिपरिषद् होता है। इस इकाई में हम विभिन्न एजेंसियों का वर्णन करेंगे जो सरकारी और नीति-निर्धारण से संबंधित कार्यों में प्रधानमंत्री को सांस्थानिक सहायता प्रदान करती हैं।

8.2 प्रधानमंत्री की शक्तियाँ और कार्य

मंत्रिपरिषद् और मंत्रिमंडल का अध्यक्ष होने के कारण संविधान ने प्रधानमंत्री को मंत्रियों की नियुक्ति के बारे में राष्ट्रपति को सलाह देने और प्रधानमंत्री और प्रशासन के बीच एक कड़ी के रूप में कार्य का अधिकार दिया। राजनीतिक कार्यपालिका के नेता के रूप में प्रधानमंत्री से यह आशा की गई है कि वह प्रशासनिक कार्य-कुशलता को सुनिश्चित करने के लिए नीति बनाने के निर्देश देंगे और जनता और संसद के साथ संपर्क स्थापित करेंगे।

प्रमुख कार्यपालक होने के नाते उनके कार्य संक्षिप्त रूप से प्रशासनिक नीति की मुख्य बातें निर्धारित करना, आवश्यक दिशा निर्देश और आदेश जारी करना, संगठनात्मक विवरण का समन्वय करना, प्रशासनिक कार्यों का पर्यवेक्षण और नियंत्रण करना तथा जन-संपर्क स्थापित करना हैं।

सरकार में प्रशासनिक प्रबंध के संबंध में प्रधानमंत्री की मुख्य भूमिकाओं में उनके सहयोगियों और वरिष्ठ अधिकारियों की योग्यताओं को पहचानना और संगठन तथा पद्धतियों में कार्यवाही और सामूहिक कार्य को प्रोत्साहित करना शामिल है।

8.3 प्रधानमंत्री की सांस्थानिक सहायता

प्रधानमंत्री को उनके सरकारी कार्यों में प्रत्यक्ष सहायता प्रदान करने के लिए सचिवीय एजेंसियों अथवा नीति-निर्माण कक्षों के रूप में सांस्थानिक व्यवस्थाओं का कई वर्षों से विकास होता रहा है। वे प्रमुख संस्थाएँ जो राजनीति और प्रशासन के संबंध में निर्णय लेने में स्वतंत्रता प्राप्ति के समय से ही प्रधानमंत्री की सहायता कर रही हैं — मंत्रिमंडल समितियाँ, मंत्रिमंडल सचिवालय और प्रधानमंत्री कार्यालय हैं।

8.4 प्रधानमंत्री कार्यालय का विकास

प्रधानमंत्री कार्यालय स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद अस्तित्व में आया। उस समय इसे प्रधानमंत्री सचिवालय कहा जाता था। यह सरकार के प्रमुख के रूप में प्रधानमंत्री को उसकी सार्वजनिक गतिविधियों और कार्यों में सहायता प्रदान करता था। सन् 1948-49 में नेहरू के प्रधानमंत्रित्व काल में कार्यालय के स्टाफ में 117 सदस्य थे, इनकी संख्या धीरे-धीरे समय के साथ बढ़ती गई। लालबहादुर शास्त्री के समय में प्रधानमंत्री सचिवालय स्वतंत्र सचिव के अधीन नियमित विभाग बन गया और उच्चस्तरीय नीति-निर्माण में इसका प्रभाव बढ़ गया।

परन्तु 1966 से 1977 तक के इंदिरा गांधी के प्रधानमंत्रित्व काल में प्रधानमंत्री सचिवालय का न केवल आकार बढ़ गया बल्कि इसकी शक्ति और अधिकार भी बढ़ गए। सन् 1968-69 में प्रधानमंत्री सचिवालय में लगभग 200 कर्मचारी थे और 1975-77 की आंतरिक स्थिति के दौरान इसका उदय अतिरिक्त-सांविधानिक शक्ति (extra-constitutional power) और अधिकार के वास्तविक केन्द्र के रूप में हुआ।

जनता पार्टी के शासन काल (1977-80) के दौरान प्रधानमंत्री सचिवालय का आकार, संख्या और अधिकार की दृष्टि से कम हो गया। जून 1977 में प्रधानमंत्री सचिवालय का नाम प्रधानमंत्री कार्यालय रख दिया गया। हालाँकि इसके कर्मचारियों की संख्या पिछले दस वर्षों से धीरे-धीरे फिर से बढ़ रही है — परन्तु इसका महत्व कम हो गया है और यह अब अतिरिक्त-सांविधानिक शक्ति (extra-constitutional power) और प्राधिकार का प्रयोग करने की कोशिश करने की अपेक्षा प्रधानमंत्री को उसकी सार्वजनिक गतिविधियों में सहायता करता है।

8.4.1 संगठन

प्रधानमंत्री के कार्यालय का प्रमुख राजनीतिक रूप में प्रधानमंत्री और प्रशासनिक रूप में प्रधान सचिव होता है। इसके अलावा दो या तीन अपर सचिव, तीन से पाँच तक संयुक्त सचिव और कई निदेशक/उपसचिव और अवर सचिव होते हैं। विशेष कार्य अधिकारी, निजी सचिव आदि अन्य अधिकारी भी होते हैं। इन अधिकारियों की सहायता के लिए नियमित कार्यालय स्थापना होती है।

प्रधानमंत्री कार्यालय में प्रमुख कर्मचारियों के अनुभव को औपचारिक ढंग से नहीं बताया गया है और इस कार्यालय में पदाधिकारियों को प्रधानमंत्री को आवश्यक रूप से 'सचिवीय सहायता' प्रदान करने के लिए नियुक्त किया जाता है। इस कार्यालय में एक सचिव होता है जो सिविल सेवा का भी हो सकता है अथवा नहीं भी हो सकता। अन्य अधिकारी आमतौर पर सिविल सेवा में लाए जाते हैं और अलग-अलग अवधि के लिए उन्हें तैनात किया जाता है। काम का बँटवारा सचिव, अपर सचिव, संयुक्त सचिव, उपसचिव और अन्य अधिकारियों के बीच हो जाता है। छोटा कार्यालय होने के कारण अधिकारीगण का परस्पर संबंध रहता है, इसलिए स्टाफ के सदस्यों के लिए कोई निश्चित कार्य निर्धारित नहीं किया जाता। काम का बँटवारा कार्यालय में स्टाफ की सुविधा और अनुभव के अनुसार किया जाता है।

8.4.2 कार्य

सचिवालय का मुख्य कार्य प्रधानमंत्री को सरकार के प्रमुख के रूप में उसके कार्यों के निष्पादन में सहायता करना होता है। सरकार के लिए यह सचिवालय केन्द्रीय मंत्रियों, राष्ट्रपति, राज्यपालों, मुख्यमंत्रियों, भारत में विदेशी सरकारों के प्रतिनिधियों और अन्य प्रकार के व्यक्तियों से संपर्क स्थापित करने तथा जनता के सदस्यों से प्राप्त प्रधानमंत्री को भेजे गए अनुरोध-पत्रों और शिकायतों को निपटाने में सहायता करने के लिए ज़िम्मेदार होता है। सामान्यतया इस सचिवालय के अधिकार-क्षेत्र का विस्तार ऐसे सभी विषय और कार्यकलाप के हो सकते हैं जो किसी पृथक मंत्रालय/विभाग को विशेष रूप से आवंटित नहीं किए गए हैं। यह संसद में उठाए गए कुछ सामान्य विषयों से संबंधित प्रश्नों के उत्तर तैयार करता है जो कठोर वर्गीकरण के कारण किसी विशेष मंत्रालय को आवंटित नहीं किए गए हों।

प्रधानमंत्री का कार्यालय कई कार्यों को करता है:

- सरकार के प्रमुख के रूप में उसकी समग्र ज़िम्मेदारियों के संबंध में प्रधानमंत्री की सहायता करना।
- योजना आयोग और राष्ट्रीय विकास परिषद् के अध्यक्ष के रूप में उसके उत्तरदायित्वों के संबंध में प्रधानमंत्री की सहायता करना।
- प्रधानमंत्री के जनसंपर्क को देखना और प्रेस और जनसाधारण से संपर्क स्थापित करना।
- उन सभी सदंर्भों, जो कार्य नियमावली के अधीन प्रधानमंत्री के पास आते, निपटाना।
- निर्धारित नियमों के अधीन आदेश के लिए प्रस्तुत मामलों की परीक्षा में प्रधानमंत्री को सहायता देना।
- राष्ट्रपति, राज्यपालों और देश में विदेशी प्रतिनिधियों से संपर्क बनाए रखना।
- प्रधानमंत्री के "सोच जलाशय" (Think tank) के रूप में कार्य करना।

परन्तु प्रधानमंत्री सचिवालय प्रधानमंत्री को मंत्रिमंडल के प्रमुख होने के नाते मिलने वाले कार्यों के लिए उत्तरदायी नहीं है। किन्तु यह सचिवालय कुछ सीमा तक उन मामलों के लिए उत्तरदायी है जिनका प्रधानमंत्री और विभिन्न मंत्रियों के बीच होने वाले पत्र-व्यवहार का निपटारा किया जाता है। यह दलगत नीतियों अथवा घरेलू प्रकार की नीतियों से संबंधित पत्र-व्यवहार को निपटाने के लिए उत्तरदायी होता है।

8.5 प्रधानमंत्री कार्यालय की बदलती हुई भूमिका

प्रत्येक प्रधानमंत्री के साथ प्रधानमंत्री कार्यालय की भूमिका में विकास एवं बदलाव आया है। नेहरू के समय कार्यालय का आकार सीमित था और इसकी भूमिका भी इसी प्रकार की थी। अतः उनके कार्यकाल में मंत्रालयों और उनके सलाहकारों पर अत्यधिक निर्भर रहने का एक विशिष्ट ढंग था ऐसा प्रतीत होता है और मंत्रिमंडल सचिव प्राथमिक कड़ी था। बाद के समय से ही प्रधानमंत्री सचिवालय इनमें कुछ कार्य कर रहा है। हालाँकि मंत्रिमंडल से संबंधित सभी मामले मंत्रिमंडल सचिव के माध्यम से ही प्रस्तुत किए जाने चाहिए। इन दोनों के बीच सीमा रेखा कठोर नहीं है और वास्तव में ऐसा हो भी नहीं सकता।

नेहरू के बाद शास्त्री ही थे जिन्होंने शक्तिशाली सचिवालय की स्थापना के लिए सर्वप्रथम कार्रवाई की। उन्होंने श्री एल.के. झा को प्रधानमंत्री का सचिव नियुक्त किया और वह सचिवालय के प्रमुख बन गए। श्री झा के शक्तिशाली और बहुमुखी व्यक्तित्व के कारण सचिवालय का स्तर बढ़ गया और इसका कार्य भी बढ़ गया। श्री झा की अगुवाई में प्रधानमंत्री कार्यालय ने निर्णय लेने में अत्यंत प्रभाव दिखलाना आरंभ कर दिया। यह प्रवृत्ति इंदिरा गांधी के प्रधानमंत्रित्व काल में और दृढ़ हुई। कार्यभार ग्रहण करने के समय इंदिरा गांधी को प्रशासन का बहुत कम अनुभव था, इसलिए उनकी सचिवालय पर निर्भरता विशेष रूप से मिश्रित, आर्थिक और विदेश नीति के मसले पर और अधिक हो गई। एल. के. झा के बाद श्री पी.एन. हक्सर आए, जिनके अधीन प्रधानमंत्री सचिवालय का स्तर इस हद तक बढ़ गया कि यह स्वतंत्र कार्यकारी शक्ति के रूप में उभर कर सामने आया। इस सचिवालय में बहुत सारी देशी और विदेश नीतियाँ बनीं और अधिक अधिकार प्रधानमंत्री कार्यालय में केन्द्रित हो गए, आंतरिक आपात् स्थिति (emergency) (1975-77) की अवधि के दौरान यह शक्ति और भी स्पष्ट हो गई और देश ने प्रधानमंत्री के प्राधिकारवादी शासन के युग में

प्रवेश किया। फलस्वरूप प्रधानमंत्री सचिवालय सभी अधिकारों का केन्द्र बन गया और इसके आदेशों का पालन सभी केन्द्रीय मंत्रालय, विभाग और अन्य कार्यकारी एजेंसियों द्वारा किया जाने लगा। श्रीमती इंदिरा गांधी के शासन काल के प्रधानमंत्री सचिवालय वास्तविक रूप से एक राष्ट्रीय नीति निर्धारण निकाय बन गया और मंत्रिमंडल सचिवालय नीतियों को लागू करने के लिए प्रधानमंत्री सचिवालय का माध्यम बन गया।

जनता पार्टी के शासन काल के दौरान प्रधानमंत्री सचिवालय में शक्ति के मौजूदा केन्द्रीकरण को विकेन्द्रित करने का प्रयास किया गया और इसे केवल "कार्यालय" का स्तर दिया गया, जिसके कार्य स्वाभाविक रूप से केवल सचिवीय हो गए। इसका यह परिणाम हुआ कि इस सचिवालय को इसके अनेक नीति निर्धारण कक्षों से वंचित होना पड़ा।

परन्तु गत आठ वर्षों में एक बार फिर इस सचिवालय में नीति-निर्धारण शक्ति के केन्द्रीकरण के प्रति स्पष्ट रूझान हुआ है। समय-समय पर विपक्ष और समाचारपत्रों द्वारा यह विचार प्रायः व्यक्त किया जाता रहा है कि प्रधानमंत्री सचिवालय वास्तव में एक "लघु मंत्रिमंडल" है क्योंकि यह प्रायः सभी प्रमुख नीतियाँ बनाने के कार्यों में मंत्रिमंडल की सहायता करने का प्रयास करता है।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थानों का प्रयोग कीजिए।

ii) इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1) प्रधानमंत्री की शक्तियों और कार्यों का वर्णन कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) उन विभिन्न निकायों के नाम बताइए जो प्रधानमंत्री को उनके सरकारी कार्यों में सांस्थानिक सहायता प्रदान करते हैं।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

3) प्रधानमंत्री कार्यालय के कार्यों का वर्णन कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

8.6 मंत्रिमंडल सचिवालय

1947 में स्वतंत्रता प्राप्ति पर वाइसराय (Viceroy) की कार्यकारी परिषद् का स्थान प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में लोकप्रिय मंत्रिमंडल ने लिया। कार्यकारी परिषद् का सचिवालय औपचारिक रूप से मंत्रिमंडल सचिवालय बना। परिणामस्वरूप वाइसराय की कार्यकारी परिषद् के सचिव का परिवर्तित नाम मंत्रिमंडल सचिव हो गया।

मंत्रिमंडल सचिवालय एक ऐसा कर्मचारी निकाय है जो उच्च स्तर पर निर्णय लेने की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण समन्वयकारी भूमिका निभाता है और यह प्रधानमंत्री के निदेश के अधीन कार्य करता है। मंत्रिमंडल सचिवालय का प्रशासनिक प्रमुख मंत्रिमंडल सचिव होता है।

8.6.1 भारत में मंत्रिमंडल सचिवालय की स्थापना

1948 में मंत्रिमंडल ने मंत्रिमंडल सचिवालय के एक अंग के रूप में आर्थिक और सांख्यिकीय समन्वय एकक (Economic and Statistical Coordination Unit) आरंभ करने का निर्णय लिया। इसका कार्य विभिन्न मंत्रालयों/विभागों के मौजूदा सांख्यिकीय कक्षों से सभी उपलब्ध सूचनाएँ प्राप्त करना था और इन सूचनाओं को समय-समय पर मंत्रिमंडल के समक्ष प्रस्तुत करना था। विभिन्न मंत्रियों के कार्यों को समन्वित करने और उन्हें आगामी कार्य के बारे में परामर्श देने की ज़रूरत भी महसूस की गई। एकक ने योजना आयोग के गठित होने तक विकास बोर्ड के सचिवालय से विकास योजनाओं से संबंधित कार्य को अपने नियंत्रण में ले लिया। इस हैसियत से इसका कार्य था केन्द्र और राज्यों की विभिन्न विकास योजनाओं की जाँच करना और उनके बारे में मंत्रिमंडल को जानकारी देना। मार्च 1950 में योजना आयोग की स्थापना के पश्चात् इस कार्य को आयोग के सुपुर्द कर दिया गया।

मंत्रिमंडल ने 1949 में केन्द्रीय सांख्यिकीय कार्यालय (Central Statistical Office) को इस सचिवालय का संबद्ध कार्यालय होने और केन्द्रीय सांख्यिकीय एकक स्थापित करने की स्वीकृति प्रदान की। तदनुसार एकक की स्थापना 1950 में हुई। इस एकक को सलाहकार की हैसियत से कार्य करना था। बाद में फरवरी 1951 में सांख्यिकीय समन्वय और सामान्य प्रकार के सांख्यिकीय प्रकाशन से संबंधित कार्य जिसे पहले तत्कालीन वाणिज्य मंत्रालय में भारत के आर्थिक सलाहकार संभाल रहे थे, मंत्रिमंडल सचिवालय में स्थानांतरित किया गया। मई 1961 में केन्द्रीय सांख्यिकीय संगठन की स्थापना की गई जिसे सांख्यिकीय एकक के साथ मंत्रिमंडल सचिवालय का सम्बद्ध कार्यालय बनाया गया।

सरकारी तंत्र (1949) के पुनर्गठन से संबंधित रिपोर्ट के बाद मंत्रिमंडल ने निर्णय लिया कि सचिवालय की आर्थिक समिति जो पहले वित्त मंत्रालय में स्थित थी, उसे मंत्रिमंडल सचिवालय का एक अंग समझा जाए और इसे आर्थिक स्कंध (economic wing) कहा जाए। आर्थिक स्कंध केन्द्रीय आर्थिक कार्यालय में परिवर्तित होना चाहता था, परन्तु प्रस्ताव को अमल में नहीं लाया जा सका और यह निर्णय लिया गया कि आर्थिक स्कंध द्वारा किए गए कार्य को वित्त मंत्रालय में स्थानांतरित कर दिया जाए, जहाँ पहले ही केन्द्रीय आर्थिक कार्यालय स्थापित हो चुका था। उसी वर्ष के शुरू में संयुक्त संचार - इलैक्ट्रानिक समिति (Joint Communication – Electronic Committee) का जो चीफ ऑफ स्टाफ कमेटी की

उप-समिति थी, रक्षा मंत्रालय से मंत्रिमंडल सचिवालय में स्थानांतरित की गई और इसे मंत्रिमंडल सचिवालय के सैन्य स्कंध से सम्बद्ध किया गया।

भारत सरकार के संगठन और पद्धति प्रभाग (Organisation and Methods Division) ने 1954 में कार्य करना आरंभ कर दिया। यह 25 मार्च 1964 तक मंत्रिमंडल सचिवालय के पृथक स्कंध के रूप में बना रहा जब तक कि गृह मंत्रालय में प्रशासनिक सुधार का एक नया विभाग स्थापित नहीं किया गया। संगठन और पद्धति प्रभाग इस नए विभाग में स्थानांतरित किया गया। 15 फरवरी 1961 को यह निर्णय लिया गया कि मंत्रिमंडल सचिवालय के संबद्ध कार्यालय केन्द्रीय सांख्यिकीय संगठन को सरकार के विभाग का प्राधिकार और स्तर प्रदान किया जाए। तदनुसार अप्रैल 1961 में मंत्रिमंडल सचिवालय के एक अंग के रूप में सांख्यिकी विभाग (Department of Statistics) बनाया गया जिसके पास सांख्यिकीय पद्धतियों पर विचार करने, सलाह देने और मानदंडों को निर्धारित करने के संबंध में सामान्य निदेश जारी करने, सभी केन्द्रीय और राज्य की एजेंसियों के आँकड़े एकत्र करने के प्रतिमानों और पद्धतियों, तथा इस प्रकार के प्रश्नों पर विषयों को निपटाने के पर्याप्त अधिकार थे। इस विभाग के अधीन दो संबद्ध कार्यालय थे जिनका नाम केन्द्रीय सांख्यिकीय संगठन (Central Statistical Organisation) और संगणक केन्द्र (Computer Centre) था। इसके अतिरिक्त इसका एक अधीनस्थ कार्यालय राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण निदेशालय (Directorate of National Sample Survey) भी था। परन्तु यह विभाग बाद में मंत्रिमंडल सचिवालय से पृथक हो गया।

अक्टूबर 1962 में चीन के आक्रमण के कारण और राष्ट्रीय आपात् स्थिति की घोषणा के बाद मंत्रिमंडल ने आपात् समिति गठित करने का निर्णय लिया। आपात् समिति को सचिवीय सहायता प्रदान करने के लिए मंत्रिमंडल सचिवालय में एक आपात् कालीन स्कंध बनाया गया।

संयुक्त आसूचना समिति (Joint Intelligence Committee) को सचिवीय सहायता प्रदान करने के लिए जुलाई 1965 में इस सचिवालय में एक नया स्कंध बनाया गया जिसे आसूचना स्कंध कहा जाता है। सितम्बर 1965 में पाकिस्तान के साथ सशस्त्र संघर्ष होने के कारण 7 अक्टूबर को मंत्रिमंडल ने निर्णय लिया कि प्रभावित क्षेत्रों में राहत और पुनर्वास की योजनाएँ बनाने और उन्हें लागू करने के लिए पुनर्वास महानिदेशालय नाम से एक एकक स्थापित किया जाए। इस एकक ने सचिवों की समिति के पूर्व निर्देशन में कार्य किया। इस समिति के प्रमुख मंत्रिमंडल सचिव थे। इस एकक को बाद में समाप्त कर दिया गया और शेष कार्य को 1 जुलाई 1966 को पुनर्वास विभाग (Department of Rehabilitation) में स्थानांतरित किया गया। जनवरी, 1966 में वित्त मंत्रालय में लोक उद्यम मंत्रिमंडल सचिवालय में चला गया लेकिन बाद में फिर इसे वित्त मंत्रालय में स्थानांतरित कर दिया गया।

संभवतः प्रशासनिक सुधार आयोग की सिफारिशों के परिणामस्वरूप जो अत्यधिक महत्वपूर्ण परिवर्तन किया गया था, वह अगस्त 1970 में मंत्रिमंडल सचिवालय में केन्द्रीय कार्मिक एजेंसी का सृजन था और गृह मंत्रालय से प्रशासनिक सुधार विभाग का फरवरी 1973 में मंत्रिमंडल सचिवालय में स्थानांतरण था।

केन्द्रीय प्रशासनिक सुधार एजेंसी की अवस्थिति का मसला विवादास्पद सिद्ध हुआ। जब भारत सरकार ने संगठन और पद्धति एजेंसी स्थापित करने का निर्णय लिया तो इसके लिए स्थान निर्धारण का विवाद उत्पन्न हुआ परन्तु गृह मंत्रालय और वित्त मंत्रालय ने अपने-अपने दावे लेकर पेश किए, परन्तु अंत में इसे मंत्रिमंडल के अधीन स्थापित करने का निर्णय किया

गया। लेकिन बाद में गृह मंत्रालय आखिरकार दस वर्ष की अवधि के पश्चात् संगठन और पद्धति एजेंसी को मंत्रिमंडल सचिवालय से गृह मंत्रालय में स्थानांतरित कराने में सफल हो गए। इसे स्वतंत्र विभाग का दर्ज़ा दिया गया। परन्तु फिर लगभग दस वर्षों के बाद प्रशासनिक सुधार विभाग ने एक बार फिर मंत्रिमंडल सचिवालय में अपना दावा प्रस्तुत किया। परन्तु जनता पार्टी के शासन काल के दौरान कार्मिक और प्रशासनिक सुधार विभाग 1977 में पुनः गृह मंत्रालय में स्थानांतरित हो गया। उसके पश्चात् यह विभाग तब से वहीं है। परन्तु इस समय यह कार्मिक और लोक शिकायत विभाग में हैं।

8.6.2 संगठन और कार्य

मंत्रिमंडल सचिवालय का गठन और इसकी भूमिका संघ सरकार के कार्यकारी कार्यों के पुनर्गठन के साथ-साथ लगातार बदलती रही है। मंत्रिमंडल सचिवालय में तीन स्कंध हैं — सिविल स्कंध, सैन्य स्कंध और आसूचना स्कंध। मुख्य सिविल स्कंध मंत्रिमंडल के लिए सचिवालय कार्य प्रणाली उपलब्ध कराता है। यह विभिन्न प्रकार की स्थायी समितियाँ और तदर्थ समितियों तथा सचिवों की अनेक समितियों के लिए जो कि मंत्रिमंडल सचिव की अध्यक्षता में कार्य करती हैं, सचिवीय सेवाएँ (सहयोग) प्रदान करता है। यह संघ सरकार के कार्य-नियम भी तैयार करता है। सैन्य स्कंध रक्षा समिति, राष्ट्रीय रक्षा परिषद्, सैन्य कार्य समिति और रक्षा मामलों से जुड़ी अन्य अनेक समितियों से संबंधित सभी सचिवीय कार्य के प्रति उत्तरदायी होता है। मंत्रिमंडल की आसूचना स्कंध संयुक्त आसूचना समिति से संबंधित मामलों को देखता है। इन तीनों स्कंधों के अलावा मंत्रिमंडल सचिवालय में संयुक्त संचार इलैक्ट्रानिक समिति भी है। मंत्रिमंडल सचिवालय का प्रमुख मंत्रिमंडल सचिव है।

मंत्रिमंडल की कार्य-कुशलता मंत्रिमंडल सचिवालय पर अत्यधिक निर्भर करती है। मंत्रिमंडल का कार्य मंत्रिमंडल की बैठकों की कार्य सूची ठीक प्रकार से तैयार करना, उसके विचारार्थ आवश्यक सूचनाएँ और सामग्री उपलब्ध कराना तथा मंत्रिमंडल और इसकी समितियों में किए गए विचार-विमर्शों और लिए गए निर्णयों के रिकार्ड तैयार करना होता है। यह संबंधित मंत्रालयों द्वारा लिए गए आवश्यक निर्णयों के कार्यान्वयन पर भी निगरानी रखता है। इस अंतिम कार्य में विभिन्न मंत्रालयों और विभागों से सूचनाएँ मँगाना भी शामिल होता है। राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति तथा सभी मंत्रालयों को मंत्रिमंडल सचिवालय मासिक सारांशों और महत्वपूर्ण मामलों पर संक्षिप्त नोट परिचालित करके विभिन्न मंत्रालयों में सरकार द्वारा किए गए प्रमुख कार्यों की जानकारी देता रहता है। यह सचिवों की समितियों को सहयोग प्रदान करता है जिनकी बैठकें मंत्रिमंडल सचिव की अध्यक्षता में उन समस्याओं पर विचार करने और सलाह देने के लिए समय-समय पर होती रहती है जिनमें अंतर-मंत्रालय के परामर्श और समन्वय की आवश्यकता पड़ती हो। यह प्रधानमंत्री के निदेश तथा राष्ट्रपति की स्वीकृत के अंतर्गत भारत सरकार के कार्य नियमों को अंतिम रूप देता है और भारत सरकार के कार्य को मंत्रालयों और विभागों में आवंटित करता है। इसके अतिरिक्त मंत्रिमंडल सचिवालय मंत्रिमंडल समितियों को सचिवीय सहायता प्रदान करता है।

8.7 मंत्रिमंडल सचिव की भूमिका

मंत्रिमंडल सचिव के कार्यालय और इसके कार्यों का स्वरूप समयानुसार बदलता रहा है। प्रशासनिक सुधार आयोग ने 1969 ने सिफारिश की कि मुख्य सचिव को तीन वर्ष की अवधि के लिए नियुक्त किया जाना चाहिए। तीन वर्ष की सेवा अवधि की सिफारिश इसलिए की गई थी ताकि अधिकारी सिविल सेवा को प्रभावकारी नेतृत्व प्रदान कर सके। हाल ही में एन डी ए (NDA) सरकार ने प्रशासनिक सुधार आयोग की यह सिफारिश स्वीकार की कि

मंत्रिमंडल सचिव को दो वर्ष की निश्चित अवधि के लिए नियुक्त किया जाना चाहिए। पहली नियुक्ति टी. आर. प्रसाद की हुई। मंत्रिमंडल सचिव सिविल सेवा का सदस्य होता है और सचिवों की समितियों की अध्यक्षता करता है। ये समितियाँ अंतर-मंत्रालयों के मामलों और सरकार से संबंध रखने वाले विषयों को देखती हैं। मंत्रिमंडल द्वारा भी समितियों को मामले भेजे जाते हैं। समितियाँ संबंधित मंत्रालय को निर्णय की सिफारिश करती है परन्तु ये समितियाँ मामलों पर निर्णय नहीं ले सकतीं।

सरकार में सभी उच्च नियुक्तियों का नियंत्रण सीधे मंत्रिमंडल सचिव द्वारा किया जाता है। 1950 के प्रारंभ से ही यह प्रक्रिया अपनाई गई है कि मंत्रिमंडल सचिव आमतौर पर मंत्रिमंडल अथवा इसकी समितियों के कागज़ात तैयार नहीं करता और न ही मंत्रिमंडल के लिए कार्य सूची के कागज़ात की विस्तृत समीक्षा करना उसका अपना एक दायित्व होता है। उसका कार्य यह सुनिश्चित करना है कि नोट स्वतः पूर्ण हों और विचार-विमर्श के लिए उपयुक्त ब्यौरे दिए गए हों, कभी-कभी स्पष्टीकरण भी माँगा जाता है अथवा संबंधित मंत्रालय के साथ संशोधन के लिए मुद्दे उठाए जाते हैं।

मंत्रिमंडल सचिव मंत्रिमंडल और इसकी समितियों की सभी बैठकों में उपस्थित रहता है। वह मंत्रिमंडल समितियों की कार्यसूची को तैयार करने, मदों की प्राथमिकताओं और विषयों के आवंटन के प्रति उत्तरदायी होता है। इन्हें प्रधानमंत्री द्वारा स्वीकृति प्रदान की जाती है। इन मामलों में मंत्रिमंडल सचिव को राष्ट्रीय प्राथमिकताओं और मंत्रालयों द्वारा जो कुछ भी महत्वपूर्ण समझा जाता है, ध्यान में रखते हुए अपना निर्णय देना पड़ता है। मंत्रिमंडल से संबंधित कार्यवृत्त मंत्रिमंडल सचिव तैयार करता है और वह लिए गए निर्णयों की सूचना मंत्रालयों में भेजता है।

मंत्रिमंडल सचिव को कई प्रकार के कार्य करने पड़ते हैं। वह सामाजिक-आर्थिक तथा राजनीतिक पक्षों पर तथा सरकारी कार्यक्रमों में लागू होने में आने वाली बाधाओं, जिन विषयों पर प्रधानमंत्री आवश्यक जानकारी चाहते हों तथा वे मामले जिनमें, प्रधानमंत्री का निर्णय अपेक्षित हो, निगरानी रखता है। मंत्रिमंडल सचिव इन सभी मामलों में अपने विवेक का प्रयोग करता है तथा उसे संबद्ध आँकड़ों की अद्यतन जानकारी रखनी पड़ती है। चूँकि इस प्रकार के आँकड़ों के निश्चित स्रोत नहीं होते और वस्तुतः हो भी नहीं सकते हैं, इसलिए मंत्रिमंडल सचिव के तालमेल की निजी दक्षता और विश्वास इस पद की दो महत्वपूर्ण आवश्यकताएँ हैं।

बोध प्रश्न 2

टिप्पणी : i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थानों का प्रयोग कीजिए।

ii) इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1) भारत में मंत्रिमंडल सचिवालय की स्थापना और उसके विकास का वर्णन कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) भारत में मंत्रिमंडल सचिव के पद के कार्य व महत्व का वर्णन कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

8.8 मंत्रिमंडल समितियाँ

मंत्रिमंडल समिति प्रणाली का प्रयोग विशिष्ट क्षेत्रों में निर्णय लेने की सुविधा के लिए करता है। राजनीतिक और आर्थिक महत्व के महत्वपूर्ण विषयों पर शीघ्र निर्णय लेने और महत्व के अन्य मामलों और प्रशासन के सुनिर्धारित क्षेत्रों में समन्वय सुनिश्चित करने के लिए कार्य नियमों में मंत्रिमंडल की स्थायी समितियों के गठन की व्यवस्था है। ये समितियाँ हालात की आवश्यकताओं के अनुसार बदलती रहती हैं। कभी-कभी तदर्थ समितियाँ भी नियुक्त की जाती हैं।

8.8.1 आकार

इस प्रकार की समितियों की संख्या समय-समय पर बदलती रहती हैं और कार्यालय से बाहर का व्यक्ति सही-सही यह नहीं बतला सकता कि विभिन्न अवधि में मौजूद समितियाँ में से कौन-कौन सही होती थीं।

परन्तु मंत्रिमंडल समितियों में सदस्यों की संख्या सामान्यतया तीन से आठ तक होती हैं। इन समितियों की अध्यक्षता प्रधानमंत्री अथवा महत्वपूर्ण विभाग संभालने वाला मंत्रिमंडल का मंत्री कर सकता है। जो समितियाँ स्थायी आधार पर कार्य करती हैं वे हैं — राजनीतिक कार्य समिति, आर्थिक कार्य समिति, संसदीय कार्य समिति, नियुक्ति समिति, आवास समिति, उद्योग और व्यापार समिति तथा खाद्य और कृषि समिति। इनमें सर्वाधिक शक्तिशाली समिति राजनीतिक कार्य समिति होती है। इस समिति में चूँकि वरिष्ठतम मंत्री होते हैं, इसलिए यह सरकार को बेहतर निदेश देने में श्रेष्ठ मंत्रिमंडल (super cabinet) के रूप में कार्य करती है।

8.8.2 कार्य और भूमिका

मंत्रिमंडल समितियाँ प्रशासन के स्पष्ट तथा परिभाषित क्षेत्रों में समन्वय स्थापित करने तथा मंत्रिमंडल के कार्य भार को कम करने के माध्यम हैं। इन समितियों की सदस्यता में लचीलापन होने के कारण मंत्रिगण विचार-विनिमय कर सकते हैं और मंत्रिमंडल के हस्तक्षेप के बग़ैर सहमति से समाधान निकाल सकते हैं। इस प्रकार मंत्रिमंडल पर कार्य का दबाव कम हो जाता है। अंत में कार्य के पर्याप्त बँटवारे के कारण कई मामले जो निर्णय लेने के लिए मंत्रिमंडल के समक्ष आने हों, उनका निपटारा मंत्रिमंडल समितियों के स्तर पर ही हो जाता है। इससे महत्वपूर्ण आर्थिक तथा राजनीतिक मसलों पर निरंतर समन्वय और आवश्यकता पड़ने पर शीघ्र निर्णय लेना सुनिश्चित हो जाता है।

कोई भी मामला जिसमें मंत्रिमंडल के निर्णय की आवश्यकता हो, मंत्रिमंडल के निर्णय लेने से पहले सीधे उपयुक्त समिति के समक्ष आ सकता है। कई बार मंत्रिमंडल, मंत्रिमंडल समितियों द्वारा लिया गया निर्णय ही स्वीकार कर लेता है।

परन्तु इस तथ्य के बावजूद कि कुछ समितियों ने वास्तविक प्राधिकार का प्रायः प्रयोग किया है, ये समितियाँ समान रूप से अथवा लगातार प्रभावशाली नहीं रही हैं। पहली बात यह है कि इन समितियों में सरकार की कार्य प्रणाली के सभी महत्वपूर्ण क्षेत्र शामिल नहीं हैं। दूसरे, ये कोई भी मामला अपने हाथ में नहीं ले सकतीं जब तक कि इसे संबंधित मंत्री अथवा मंत्रिमंडल द्वारा न भेजा गया हो। इन समितियों की बैठक नियमित रूप से नहीं होती। प्रभावशाली न होने का यह भी एक कारण है कि जटिल समस्याओं पर ध्यान दिए जाने के लिए तथा महत्वपूर्ण नीतियों और कार्यक्रमों के लागू होने की प्रगति पर लगातार निगरानी के लिए इन बैठकों का नियमित रूप से होना अत्यंत आवश्यक है।

बोध प्रश्न 3

टिप्पणी : i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थानों का प्रयोग कीजिए।

ii) इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1) मंत्रिमंडल समितियाँ किसे कहते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) मंत्रिमंडल में निर्णय लेने के कार्य पर मंत्रिमंडल समितियाँ किस तरह प्रभाव डालती हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

8.9 सारांश

इस इकाई में आपने निम्नलिखित के विषय में पढ़ा है:

- वास्तविक कार्यपालक के रूप में प्रधानमंत्री की शक्तियाँ और कार्य
- प्रधानमंत्री को उनके सरकारी कार्यों में सांस्थानिक सहायता प्रदान करने वाले निकाय

- प्रधानमंत्री कार्यालय का विकास, इसका गठन, कार्य तथा बदलता हुआ स्वरूप
- भारत में मंत्रिमंडल सचिवालय का अस्तित्व, इसके संगठन और कार्य
- मंत्रिमंडल सचिव की भूमिका
- मंत्रिमंडल समितियों का आकार, कार्य और भूमिका

8.10 शब्दावली

संविधान से इतर (Extra-constitutional) : जिसका संविधान में उल्लेख न किया गया हो।

लघु मंत्रिमंडल (Micro-cabinet) : एक छोटा निकाय जो मंत्रिमंडल के कार्यों के समान ही कार्य करता है।

राष्ट्रीय आपात् स्थिति : युद्ध, बाह्य आक्रमण या सशस्त्र विद्रोह (अनुच्छेद 352) के कारण घोषित होने वाली आपात् स्थिति। यह सांविधानिक तंत्र (अनुच्छेद 356) की गड़बड़ी तथा वित्तीय आपात् स्थिति (अनुच्छेद 360) के कारण राज्यों में घोषित होने वाली आपात् स्थिति से भिन्न होती है। वित्तीय आपात् स्थिति में राष्ट्रपति संघ तथा राज्यों के बीच वित्तीय संबंधों के आवंटन के प्रावधानों के संशोधन कर सकता है।

वास्तविक कार्यपालक : वह व्यक्ति होता है जिसके पास नाममात्र के कार्यपालक की विधायी शक्तियाँ हस्तांतरित हो जाती है। कानूनी तौर पर सभी शक्तियाँ नाममात्र के कार्यपालक में निहित होती हैं, पर वह व्यवहार में उनका प्रयोग नहीं करता। वास्तविक कार्यपालक के पास कानूनी तौर पर कोई भी शक्ति नहीं होती, परन्तु व्यवहार में सभी शक्तियाँ नाममात्र के प्रमुख कार्यपालक में निहित होती हैं, इंग्लैंड में रानी और भारत में राष्ट्रपति नाममात्र के कार्यपालक हैं, परन्तु अमेरिका को राष्ट्रपति और भारत का प्रधानमंत्री वास्तविक कार्यपालक के उदाहरण हैं।

8.11 संदर्भ और उपयोगी पुस्तकें

Avasthi, A, 1980, *Central Administration*, Tata McGraw Hill, New Delhi.

Chanda, Ashok, 1967, *Indian Administration*, Allen and Unwin, London.

Jain, H.M, 1969, *The Union Executive*, Chaitanya Publishing House, Allahabad.

Khera, S.S, 1975, *The Central Executive*, Orient Longman, New Delhi.

Maheshwari, S.R, 1975, *Indian Administration*, Orient Longman, New Delhi.

Sharma, L.N, 1976, *The Indian Prime Minister*, Macmillan, New Delhi

8.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें होनी चाहिएः

- प्रधानमंत्री की मंत्रिपरिषद् के प्रमुख के रूप में भूमिका
- प्रधानमंत्री की सलाहकार के रूप में भूमिका
- प्रधानमंत्री राष्ट्रपति और प्रशासन के बीच की महत्वपूर्ण कड़ी
- प्रधानमंत्री द्वारा कार्मिकों की नियुक्ति और निष्कासन
- निर्देशन जारी करना तथा नीतियाँ बनाना

2) भाग 8.3 देखिए

3) आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें होनी चाहिएः

- प्रधानमंत्री कार्यालय का विकास का संक्षिप्त वर्णन
- प्रधानमंत्री कार्यालय के गठन का संक्षिप्त वर्णन
- मंत्रियों तथा विदेशी सरकारों के प्रतिनिधियों के साथ संबंध बनाए रखने में प्रधानमंत्री के सहयोग प्रदान करने से संबंधित कार्य
- प्रधानमंत्री कार्यालय में प्रधानमंत्री को भेजी गई जनता की शिकायतों का निपटारा
- प्रधानमंत्री कार्यालय में सामान्य विषयों पर संसद में उठाए गए प्रश्नों के लिए तैयार किए उत्तर

बोध प्रश्न 2

1) आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें होनी चाहिएः

- मंत्रिमंडल सचिवालय का अभिप्राय
- 1948 में मंत्रिमंडल सचिवालय में उसके एक अंग के रूप में आर्थिक और सांख्यिकीय एकक (ई.एस.सी.यू.) था
- 1950 में आर्थिक और सांख्यिकीय एकक का कार्य योजना आयोग में चली गई
- 1951 में केन्द्रीय सांख्यिकीय एकक की स्थापना की गई और सांख्यिकीय समन्वय तथा प्रकाशन से संबंधित कार्य मंत्रिमंडल सचिवालय को स्थानांतरित कर दिया गया
- 1961 में मंत्रिमंडल सचिवालय के एक अंग के रूप में सांख्यिकी विभाग बनाया गया
- 1962 में मंत्रिमंडल सचिवालय में आपात् स्कंध बनाया गया
- 1965 में सचिवालय में आसूचना स्कंध भी बना दिया गया
- कार्यपालक एवं पद्धति प्रभाग 1954 से 1964 तक मंत्रिमंडल सचिवालय का एक पृथक खंड था

2) भाग 8.7 देखिए

बोध प्रश्न 3

1) भाग 8.8 देखिए

2) आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें होनी चाहिए :

- मंत्रिमंडल समितियाँ प्रशासन में समन्वय स्थापित करने का माध्यम होती हैं
- मंत्रिमंडल समितियों में विचार विनिमय होता है तथा सहमति से समाधान निकल आते हैं
- मंत्रिमंडल समितियाँ मंत्रिमंडल के कार्यों को कम करने के लिए कई मामलों का निपटारा करती हैं
- शीघ्र निर्णय लेना आसान बनाती हैं
- मंत्रिमंडल समितियों की असफलता के कारण

इकाई 6 सांविधानिक ढाँचा

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 बुनियादी विशेषताएँ

6.3 केन्द्रीय सरकार की शक्तियाँ

6.4 मंत्रिपरिषद् की भूमिका

6.5 सांविधानिक प्राधिकरण और आयोग

- 6.5.1 भारत का नियंत्रक-महालेखापरीक्षक
- 6.5.2 भारत का महान्यायवादी
- 6.5.3 भाषीय अल्पसंख्यकों के लिए विशेष अधिकारी

6.6 सांविधानिक आयोग

- 6.6.1 वित्त आयोग
- 6.6.2 निर्वाचन आयोग
- 6.6.3 राजभाषा आयोग
- 6.6.4 संघ लोक सेवा आयोग
- 6.6.5 राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग
- 6.6.6 राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति आयोग

6.7 सारांश

6.8 शब्दावली

6.9 संदर्भ एवं उपयोगी पुस्तकें

6.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

6.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद, आप

- भारत के सांविधानिक ढाँचे को समझ सकेंगे
- हमारे संविधान की बुनियादी विशेषताओं पर प्रकाश डाल सकेंगे
- केन्द्रीय और राज्य सरकारों के बीच विभाजित शक्तियों की चर्चा कर सकेंगे; और
- मंत्रिपरिषद्, विभिन्न सांविधानिक आयोगों और सांविधानिक प्राधिकरणों की भूमिका का विश्लेषण कर सकेंगे।

6.1 प्रस्तावना

भारत का संविधान एक असाधारण दस्तावेज़ है। इसका न केवल नवोदित राज्यों में बल्कि विश्व के सांविधानिक इतिहास में भी महत्वपूर्ण स्थान है। भारत के संविधान में संघ एवं राज्यों के बीच संबंधों तथा लोक सेवाओं, विशेष वर्गों यथा-आंग्ल-भारतीयों, अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों से संबंधित समस्याओं पर सविस्तार विचार किया गया है। इस संविधान में मूल अधिकारों की विस्तृत सूची तथा सरकारी नीति से संबंधित निर्देशक सिद्धान्त भी दिए गए हैं। संविधान की प्रस्तावना में यह घोषणा की गई है कि भारत एक सर्वसत्ताधारी समाजवादी धर्मनिरपेक्ष लोकतंत्रीय गणराज्य होगा। इसकी विशेषताओं का अध्ययन करने से यह पता चलता है कि यह संविधान आकार, रूप एवं विषय-वस्तु की दृष्टि से एक अनूठा दस्तावेज़ है। इस इकाई में हम अपने संविधान के महत्वपूर्ण विशेषताओं, मंत्रिपरिषद् की भूमिका, सांविधानिक प्राधिकरणों, सांविधानिक आयोगों एवं केन्द्रीय सरकार की शक्तियों का अध्ययन करेंगे। इस इकाई से आपको इस बात की स्पष्ट जानकारी हासिल होगी कि केन्द्रीय स्तर पर हमारा सांविधानिक गठन किस प्रकार कार्य कर रहा है।

6.2 बुनियादी विशेषताएँ

लिखित संविधान

संविधान दो प्रकार के हो सकते हैं - लिखित अथवा अलिखित। अलिखित संविधान वे हैं जिनमें अधिकांश उपबंध संहिताबद्ध रूप में नहीं दिए जाते हैं बल्कि वे देश की परिपाटियों तथा परम्पराओं पर आधारित होते हैं। उदाहरण के लिए, ब्रिटेन का संविधान अलिखित है। दूसरी तरफ, लिखित संविधान वे होते हैं जिनके अधिकांश उपबंध स्पष्टतः लिखित रूप में दिए जाते हैं। उदाहरण के लिए, संयुक्त राज्य अमेरिका का संविधान एक लिखित संविधान है।

भारतीय संविधान एक लिखित संविधान है। यह विश्व का सर्वाधिक विस्तृत सांविधानिक दस्तावेज़ है। इसके अधिकांश उपबंध सभी ज्ञात संविधानों से इस ढंग से लिए गए हैं कि वे देश की वर्तमान स्थितियों एवं आवश्यकताओं के अनुकूल हैं। संविधान के निर्माताओं ने मूल अधिकारों का अध्याय अमरीकी संविधान के मॉडल पर तैयार किया था। सरकार की संसदीय प्रणाली यू.के. से ली गई है। सरकारी नीति के निर्देशक सिद्धान्तों की संकल्पना आयरलैंड गणराज्य के संविधान से ली गई थी। आपात संबंधी उपबंधों को जर्मन साम्राज्य के संविधान तथा भारत सरकार के अधिनियम, 1935 को ध्यान में रखते हुए शामिल किया गया था।

हमारा संविधान इसलिए विस्तृत है क्योंकि इसमें अन्य देशों के न्यायिक निर्णयों के आशोधित परिणाम शामिल किए गए हैं ताकि अनिश्चितता कम से कम हो। हमारे संविधान में न्यायपालिका, लोक सेवाओं, संघ लोक सेवा आयोग, केन्द्र-राज्य संबंध आदि के बारे में विस्तृत उपबंध दिए गए हैं। हमारे संविधान के विस्तृत होने का एक दूसरा कारण यह भी है कि हमारा देश विशाल है तथा देश की वर्तमान समस्याएँ भी असाधारण हैं।

महत्वपूर्ण आमुख

विश्व में अन्य संविधान की भाँति भारत के संविधान में भी प्रस्तावना है, जो भारत के लोगों के उद्देश्यों और आकांक्षाओं को प्रतिबिम्बित करती है। हमारे संविधान की मूल विचारधारा भी

हमारे संविधान की प्रस्तावना में झलकती है। यह सही है कि इसे कानून के दौरान लागू नहीं किया जा सकता है। परन्तु उच्चतम न्यायालय ने कई निर्णयों में प्रस्तावना की सहायता ली है। प्रस्तावना संविधान का एक भाग है जिसका पठन इस प्रकार है:

"**हम भारत के लोग** यह दृढ़ संकल्प करते हैं कि हम भारत को एक **संपूर्ण प्रभुत्व-सम्पन्न लोकतंत्रात्मक गणराज्य बनाएँगे**

तथा उसके समस्त नागरिकों को:

सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय,

विचार अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता,

प्रतिष्ठा और अवसर समानता

प्राप्त कराएँगे

तथा उन सबमें व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की

एकता सुनिश्चित करने वाली बंधुता बढ़ाएँगे

इसलिए, अपनी इस संविधान सभा में आज तारीख 26 नवम्बर 1949 ई. (मिति मार्गशीर्ष शुक्ला सप्तमी, संवत दो हजार छह विक्रमी) को एतदद्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।"

इस प्रकार प्रस्तावना सरकार की प्रणाली और उसके उद्देश्यों, विचारों और मूल्यों को निर्धारित करती है। संविधान को लागू करना और ऐसा वातावरण सृजन करना प्रशासन का उत्तरदायित्व है जिसमें प्रस्तावना में प्रतिष्ठापित आदर्शों का अनुप्रयोग संभव हो सकता है।

संसदीय लोकतंत्र

हमारे संविधान की एक और महत्वपूर्ण विशेषता केन्द्र तथा राज्य स्तरों पर संसदीय प्रणाली की स्थापना, सरकार की संसदीय प्रणाली में कार्यपालिका संसद के प्रति उत्तरदायी है न कि राष्ट्रपति के प्रति। इसके आधार पर केन्द्र को मज़बूत बनाया जाता है और केन्द्रीय विधान मंडल अर्थात संसद को कानून बनाने के संविधायी एवं अवशिष्ट अधिकार प्रदान किए जाते हैं। संसदीय लोकतंत्र को अंगीकार करने के दो कारण थे— पहला हमें ब्रिटिश शासन के दौरान संसदीय प्रणाली में काम करने का पिछला अनुभव था, और दूसरा सरकार की संसदीय प्रणाली के अनुसार यह माँग की जाती है कि केन्द्र मज़बूत होना चाहिए जबकि विभक्त सत्ता वाली सरकार की राष्ट्रपति प्रणाली में यह बात नहीं होती। सरकार की संसदीय प्रणाली में कार्यपालिका तथा कानून एक दूसरे से स्वतंत्र नहीं हैं बल्कि कार्यपालिका विधान मंडल का एक अंग है। इसलिए, इन दोनों के बीच विरोध उत्पन्न होने की संभावना कम होती है जबकि राष्ट्रपति प्रणाली में यह संभावना सदैव बनी रहती है।

संघवाद

भारतीय संविधान का राजनीतिक ढाँचा दो सिद्धान्तों — सरकार की संसदीय प्रणाली तथा संघवाद — पर आधारित है, हालाँकि 'संघ' शब्द का प्रयोग संविधान में नहीं किया गया है। हमारे संविधान के सर्वेक्षण से यह पता चलता है कि इसमें संघीय प्रणाली की सभी आवश्यक विशेषताएँ विद्यमान हैं। एकात्मक राज्य में केवल एक सरकार होती है नामतः राष्ट्रीय सरकार जबकि संघीय राज्य में दो सरकारें होती हैं, अर्थात् राष्ट्रीय या संघीय सरकार तथा घटक राज्यों की सरकारें।

जहाँ तक सामूहिक हितों को प्रभावित करने वाले मामलों का संबंध है, संघीय राज्य में अनेक राज्य शामिल होते हैं। लेकिन अन्य मामलों में प्रत्येक राज्य का स्वायत्त शासन होता है। राज्य संघीय सरकार के एजेंट नहीं होते हैं। लेकिन संघीय सरकार तथा राज्य सरकार दोनों ही संविधान से सत्ता ग्रहण करते हैं। राज्यों को संघ से पृथक होने का अधिकार नहीं है।

संघीय राज्य संविधान से अपना अस्तित्व ग्रहण करता है। कार्यपालक विधायी या न्यायिक - प्रत्येक शक्ति, चाहे वह संघ से सबंधित हो या घटक राज्यों से — संविधान के अधीन दी जाती है और उसी के द्वारा नियंत्रित होती है। संविधान की व्याख्या करने की अंतिम शक्ति तथा संघीय और राज्य सरकारों या उनके विभिन्न घटकों की कोई भी ऐसी कार्रवाई जिससे संविधान के उपबंधों का उल्लंघन होता हो, उसे अकृत करने का अधिकार न्यायालयों के पास होता है। संघ-राज्य की दूसरी महत्वपूर्ण विशेषता यह होती है कि संघीय सरकार तथा घटक राज्यों की सरकारों के बीच अधिकार बँटे हुए होते हैं।

ये सभी विशेषताएँ भारतीय राजनीतिक प्रणाली में मौजूद हैं। भारतीय संविधान को आवश्यकताओं तथा परिस्थितियों के अनुसार संघीय और एकात्मक — दोनों ही प्रकार का कहा जा सकता है। इस संविधान को इस ढंग से तैयार किया गया है कि सामान्य परिस्थितियों में यह संघीय प्रणाली के रूप में कार्य करता है। लेकिन युद्धकाल, विप्लव या राज्यों में सांविधानिक तंत्र के ठप हो जाने की स्थिति में यह एकात्मक प्रणाली के रूप में काम करता है। जब देश में आपात स्थिति की घोषणा कर दी जाती है तब संघीय राज्य स्वतः एक एकात्मक राज्य में बदल जाता है।

मूल अधिकार

संविधान भारतीय नागरिकों को मूल अधिकारों का वायदा करता है। वे संविधान के खंड III में अनुच्छेद 12 से 15 में हैं। संविधान निर्माताओं ने इस संबंध में संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधान से प्रेरणा ली। संसद इन अधिकारों को केवल अपने ही संविधान में उल्लिखित प्रक्रिया के अनुसार संशोधित करके निरस्त कर सकती है या कम कर सकती है। उच्चतम न्यायालय को भी इन अधिकारों के संरक्षण के लिए उत्तरदायी बनाया गया है, अर्थात् पीड़ित व्यक्ति इन अधिकारों के प्रवर्तन के लिए सीधे उच्चतम न्यायालय में जा सकता है। यद्यपि ये अधिकार न्यायसंगत है परन्तु ये अप्रतिबंध नहीं हैं और इसलिए सरकार उनपर यथोचित प्रतिबंध लगा सकती है। फिर भी ऐसे प्रतिबंध न्यायसंगत हैं या नहीं, यह निर्णय न्यायालयों द्वारा किया जाता है।

राज्य की नीति के निदेशक तत्व

राज्य की नीति के निदेशक तत्व संविधान भाग में अनुच्छेद 36 से 51 में हैं। ये तत्व आयरलैंड के संविधान से लिए गए हैं। ये तत्व देश के शासन में मूल हैं और कानून बनाने में इन तत्वों का प्रयोग करना राज्य का कर्त्तव्य है। निदेशक तत्व न्यायसंगत इत्तर हैं, अर्थात् उनके उल्लंघन के लिए न्यायालय में चुनौती नहीं दी जा सकती है।

मूल कर्त्तव्य

इन मूल कर्त्तव्यों को 1976 के 42वें संविधान संशोधन द्वारा जोड़ा गया था। दस कर्त्तव्य हैं जिन्हें संविधान के भाग 4क के अनुच्छेद 51क में विनिर्दिष्ट किया गया है। राज्य की नीति के निदेशक तत्वों की भाँति ये भी न्यायसंगत इत्तर हैं, अर्थात उनके उल्लंघन को न्यायालय द्वारा लागू नहीं किया जा सकता है। इसके अलावा उनके उल्लंघन के विरुद्ध कोई कानूनी स्वीकृति नहीं है।

नम्यता और अनम्यता का अनुपम मिश्रण

संघीय प्रणाली में संविधान आमतौर पर अनमनीय होता है। संविधान की अनम्यता दो बातों पर निर्भर करती है। पहली इस बात पर कि संशोधन प्रक्रिया में कितनी कठिनाई आती है। दूसरी इस बात पर कि संविधान की विषयवस्तु क्या है।

भारतीय संविधान आंशिक रूप से लचीला और अंशतः अनमनीय है। संविधान के कुछ उपबंधों के संशोधन के लिए ही राज्य विधानमंडलों द्वारा अनुसमर्थन करवाने की आवश्यकता पड़ती है और वह भी केवल आधे विधान मंडलों के अनुसमर्थन की। शेष संविधान का संशोधन संसद के साधारण बहुमत द्वारा किया जा सकता है जैसा कि सामान्य कानून बनाने के लिए अपेक्षित है। जिन मामलों में राज्यों का अनुसमर्थन प्राप्त करना ज़रूरी नहीं है, उसके कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं: (क) राज्यों के नाम, सीमाओं और क्षेत्र में परिवर्तन करना और राज्यों को मिलाना तथा अलग करना (अनुच्छेद 4); (ख) किसी राज्य विधान मंडल के दूसरे सदन को समाप्त करना या सृजित करना (अनुच्छेद 169); (ग) अनुसूचित क्षेत्रों और अनुसूचित जनजातियों का प्रशासन (पाँचवी अनुसूची का पैरा 7 और छठी अनुसूची का पैरा 21)। हमारा संविधान लचीला इसलिए है क्योंकि संसद कानून बनाकर इसके उपबंधों में वृद्धि कर सकती है।

हमारे संविधान की नम्यता इस बात में भी देखी जा सकती है कि स्वतंत्रता प्राप्त करने के बाद इकावन (51) वर्षों के दौरान संविधान में पिचासी (85) बार संशोधन किया जा चुका है।

न्यायपालिका की स्वतंत्रता

हमारे संविधान की एक और अत्यंत महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि न्यायपालिका स्वतंत्र है और उसे न्यायिक समीक्षा करने का अधिकार है। भारत में केन्द्र और राज्यों के लिए न्यायालयों की एक ही समेकित प्रणाली है जो केन्द्र तथा राज्यों के कानून का प्रशासन करती है। समस्त न्यायिक प्रणाली की सर्वोच्च संस्था भारत का उच्चतम न्यायालय है। उच्चतम न्यायालय के नीचे उच्च न्यायालय होते हैं और उच्च न्यायालयों के नीचे अधीनस्थ न्यायालय होते हैं।

उच्चतम और उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों की नियुक्ति राष्ट्रपति करते हैं। लेकिन यह सुनिश्चित करने के लिए कि वे स्वतंत्र हैं, उन्हें सेवा-शर्तों का विनियमन संविधान द्वारा किया जाता है और राष्ट्रपति अपनी मर्ज़ी से उन्हें सेवा से नही हटा सकते। उच्चतम न्यायालय तथा उच्च न्यायों के न्यायाधीशों को राष्ट्रपति केवल तभी हटा सकते हैं जब संसद के प्रत्येक सदन के विशेष बहुमत (जैसे उस सदन के कुल सदस्यों के बहुमत से तथा उस सदन के उपस्थित एवं मतदाता सदस्यों के बहुमत से जो 1/3 से कम न हो) द्वारा न्यायाधीशों के प्रमाणित दुर्व्यवहार और अक्षमता के आधार पर उक्त आशय का समावेदन किया गया हो। इससे यह सुनिश्चित होता है कि न्यायपालिका उचित एवं स्वतंत्र ढंग से कार्य करेगी और इसी से संविधान के उपबंधों की सार्थकता सिद्ध होती है।

उच्चतम न्यायालय तीन महत्वपूर्ण कार्य करता है:

i) यह मूल अधिकारों का रक्षक एवं गारंटीकर्ता है।

ii) यह कार्यपालक प्राधिकारों पर अंकुश रखने का कार्य करता है तथा विधिसम्मत शासन लागू करता है।

iii) यह संघीय संतुलन बनाए रखता है।

इसके अलावा न्यायिक समीक्षा का अधिकार भी हमारे संविधान की एक अन्य विशेषता है। यदि मोटे तौर पर कहा जाए तो न्यायिक समीक्षा का तात्पर्य कार्यपालक एवं विधायी दोनों प्रकार के लोक-प्राधिकारियों के कार्यों की सांविधानिक विधि मान्यता बताना है। 'न्यायिक समीक्षा' जैसी अभिव्यक्ति का प्रयोग संविधान में नहीं किया गया है लेकिन न्यायपालिका द्वारा इसे विभिन्न उपबंधों से ग्रहण कर लिया गया है। भारत में अंततः न्यायपालिका ही यह निर्धारित करती है कि मूल अधिकारों की सीमा क्या होगी। उच्चतम न्यायालय को यह देखना होगा कि सभी विधायी उपाय विधि द्वारा स्थापित प्रकिया के अनुसार हैं। न्यायपालिका को संविधान की व्याख्या करने तथा संविधान के विभिन्न अंगों के संबंधों को निर्धारित करने का भी अधिकार है।

हमारे संविधान की अद्वितीय विशेषता है कि सरकार के तीसरे स्तर के रूप में स्थानीय सरकार को सांविधानिक स्थिति प्रदान की गई है। 73वें संविधान संशोधन अधिनियम 1992 द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में पंचायतों, 74वें संविधान संशोधन द्वारा शहरी क्षेत्रों में नगरपालिकाओं के तीन प्रकारों को लागू किया गया है। इस पर विस्तार से चर्चा खंड 4 में की जाएगी।

संविधान की एक अन्य अद्वितीय विशेषता यह है कि इसमें सिविल सेवाओं पर एक विशेष अध्याय है। यह इस बात का संकेत है कि सिविल सेवाओं को प्रमुख स्थान दिया गया है। संविधान के निर्माताओं ने स्वतंत्र निकाय गठित किए हैं, जैसे सिविल सेवकों की भर्ती के लिए लोक सेवा आयोग। इसके अलावा उन्होंने सिविल सेवकों के संरक्षण से संबंधित कुछ विशेष प्रावधान (अनुच्छेद 311) किए। यह अन्य संविधानों के लिए अप्रासंगिक है।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थानों का प्रयोग कीजिए।

ii) इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1) संविधान के निर्माताओं ने मूल अधिकारों वाला अध्याय निम्नलिखित मॉडल के आधार पर तैयार किया था:

   क) ब्रिटिश संविधान

   ख) अमरीकी संविधान

   ग) कनाडा का संविधान

   घ) फ्रांस का संविधान

2) भारत का संविधान इतना विस्तृत क्यों है?

   .....

   .....

   .....

   .....

   .....

   .....

3) संसदीय लोकतंत्र का अर्थ क्या है?

   .....

   .....

.....

.....

.....

.....

4) संघीय प्रणाली के सारभूत विशेषताएँ क्या हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

5) न्यायिक समीक्षा से क्या तात्पर्य है?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

6.3 केन्द्रीय सरकार की शक्तियाँ

संघीय संतुलन पर प्रभाव डालने वाली भारतीय संविधान की महत्वपूर्ण विशेषताओं पर चर्चा करने के बाद अब हम केन्द्र और राज्यों की शक्तियों के विभाजन के बारे में चर्चा करेंगे। शक्तियों का यह विभाजन ही संघवाद का मूल सिद्धान्त है।

संविधान में केन्द्र तथा राज्यों के बीच विधायी शक्तियों के वितरण से संबंधित व्यवस्था तीन विषय-सूचियों के अनुसार की गई है। ये सूचियाँ हैं — संघीय सूची, राज्य सूची तथा समवर्ती सूची। संघीय सूची के अनुसार केन्द्र को राष्ट्रीय महत्व के मामलों में कार्रवाई करने का अनन्य प्राधिकर दिया गया है। इसकी निन्नावें (99) मदों में रक्षा, विदेशी मामले, मुद्रा, संचार, बैंकिंग, आय कराधान तथा सीमा शुल्क संबंधी विषय शामिल हैं।

राज्य सूची में कानून तथा व्यवस्था, स्थानीय सरकार, जन स्वास्थ्य, शिक्षा और कृषि जैसी इकसठ (61) प्रविष्टियाँ (entries) शामिल हैं।

समवर्ती सूची में ब्यावन (52) प्रविष्टियाँ हैं। जिनमें विधि-प्रणाली, व्यापार तथा उद्योग और आर्थिक तथा सामाजिक योजना विषय शामिल हैं। समवर्ती प्रविष्टियों के संबंध में केन्द्रीय संसद द्वारा पारित कानून राज्य विधान मंडलों द्वारा पारित कानूनों पर अभिभावी होते हैं। अवशिष्ट शक्तियाँ केन्द्र के पास होती हैं। केन्द्र तथा राज्य के बीच विरोध उत्पन्न होने की स्थिति में केन्द्रीय कानून अभिभावी होते है।

इस प्रकार संविधान के अनुसार राज्य सरकारों की तुलना में केन्द्रीय सरकार को बहुत अधिक शक्तियाँ प्रदान की गई हैं। आपात् स्थिति के दौरान संसद राज्य सूची में उल्लिखित किसी भी मामलों में सम्पूर्ण भारत या उसके किसी भाग के लिए कानून बना सकती है। यदि राष्ट्रपति को राज्यपाल सलाह देता है या यदि वह स्वयं यह महसूस करता है कि राज्य की सरकार को संविधान की व्यवस्थाओं के अनुसार नहीं चलाया जा सकता तो आपात् स्थिति की घोषणा कर सकता है और कार्यपालिका के कार्यों का भार ग्रहण कर सकता है तथा यह घोषणा कर सकता है कि राज्य विधानसभाओं की शक्तियाँ अब संसद के अधीन होंगी। यहाँ तक कि राज्य सभा दो तिहाई मतों के आधार पर संसद से अनुरोध कर सकती है कि वह अस्थायी अवधि के लिए राज्य सूची में दर्ज मदों के संबंध में कानून बनाए।

6.4 मंत्रिपरिषद् की भूमिका

संघ कार्यपालिका का अध्यक्ष भारत का राष्ट्रपति होता है और राज्यों में राज्यपाल कार्यपालक अध्यक्ष होता है। यद्यपि केन्द्र की कार्यपालक शक्ति राष्ट्रपति के पास होती हैं। व्यवहार में राष्ट्रपति को सहायता एवं सलाह देने के लिए मंत्रिपरिषद् होता है जिसका अध्यक्ष प्रधानमंत्री होता है। केन्द्रीय विधान सभा को संसद कहा जाता है। इसमें राष्ट्रपति तथा दो सदन शामिल होते हैं। निम्न सदन को हाउस ऑफ पीपल (House of People) या लोक सभा कहा जाता है। कानून बनाने की सम्पूर्ण ज़िम्मेदारी प्रधानमंत्री पर होती है जो मंत्रिपरिषद् का अध्यक्ष होता है। संविधान में यह व्यवस्था दी गई है कि एक मंत्रिपरिषद् होगा जिसका अध्यक्ष प्रधानमंत्री होगा जो राष्ट्रपति को सहायता एवं सलाह देगा। राष्ट्रपति अपने कार्य-निष्पादन के दौरान पुनर्विचार के बाद दी गई सलाह के अनुसार कार्य करेगा (अनुच्छेद 74)। प्रधानमंत्री का चयन राष्ट्रपति करता है तथा अन्य मंत्रियों की नियुक्ति वह प्रधानमंत्री की सलाह से करता है (अनुच्छेद 75(1))।

संविधान में मंत्रिपरिषद् के सदस्यों की संख्या निर्दिष्ट की गई है। संविधान (इक्कानवाँ (51st) संशोधन) अधिनियम 2003 के अनुसार मंत्रिपरिषद् में प्रधानमंत्री सहित मंत्रियों की कुल संख्या लोक सभा के सदस्यों की कुल संख्या के पंद्रह प्रतिशत से अधिक नहीं होनी चाहिए। सभी मंत्रियों का दर्ज़ा एक समान नहीं होता है। उन्हें तीन दर्ज़ों में वर्गीकृत किया गया है:

क) मंत्रिमंडल सदस्य

ख) राज्य मंत्री

ग) उप मंत्री

इस प्रकार मंत्रिपरिषद् एक सामूहिक निकाय है जिसमें विभिन्न दर्ज़ों के मंत्री शामिल होते हैं। भिन्न-भिन्न मंत्रियों का दर्ज़ा प्रधानमंत्री निर्धारित करता है। प्रधानमंत्री उनके लिए विभागों का भी बँटवारा करता है। मंत्रियों का चयन दोनों में से किसी भी सदन से किया जा सकता है। किसी एक ही सदन के सदस्य को अन्य सदन की कार्यवाहियों में बोलने तथा उनमें भाग लेने का अधिकार होता है। लेकिन उसे उस सदन में मत देने का अधिकार नहीं होता जिसका वह सदस्य नहीं है। संविधान के तहत् विधान मंडल के बाहर से किसी व्यक्ति को मंत्री के रूप में नियुक्त करने पर कोई रोक नहीं है। लेकिन वह मंत्री के रूप में छह महीने से अधिक अवधि के लिए नहीं रह सकता यदि वह संसद के दोनों में से किसी एक सदन में सीट प्राप्त न कर ले। हालाँकि सिद्धान्त रूप में मंत्रिपरिषद् का कार्य केवल राष्ट्रपति को सहायता तथा सलाह देना है, लेकिन व्यवहार में संविधान द्वारा राष्ट्रपति को प्रदत्त व्यापक शक्ति का प्रयोग मंत्रिपरिषद् करता है जिसका अध्यक्ष प्रधानमंत्री होता है।

हमारा संविधान सामूहिक ज़िम्मेदारी की संकल्पना पर आधारित है। मंत्रिपरिषद् संसद के निम्न सदन (लोअर हाउस) के प्रति सामूहिक रूप से ज़िम्मेदार है। सामूहिक ज़िम्मेदारी का तात्पर्य यह है कि यदि सरकार एक बार कोई निर्णय ले लेती है तो वह सभी मंत्रियों के लिए बाध्यकारी है। एक निकाय के रूप में मंत्रालय का यह सांविधानिक दायित्व होगा कि विधान मंडल के निम्न सदन (लोक सभा) में उसका बहुमत समाप्त होते ही वह त्यागपत्र दे दें।

लेकिन व्यवहारिक तौर पर एक संस्था के रूप में मंत्रिपरिषद् की बैठक बहुत कम होती हैं। मंत्रिपरिषद् का अंदरूनी निकाय अर्थात् मंत्रिमंडल ही वस्तुतः सभी सरकारी नीतियों का निर्माण करता है।

6.5 सांविधानिक प्राधिकरण और आयोग

संविधान में निम्नलिखित प्राधिकरणों और आयोगों की स्थापना की भी व्यवस्था है:

1) भारत का नियंत्रक-महालेखापरीक्षक (अनुच्छेद 148-151)
2) निर्वाचन आयोग (अनुच्छेद 324)
3) संघ लोक सेवा आयोग (अनुच्छेद 315-323)
4) भारत का महान्यायवादी (अनुच्छेद 76)
5) भाषीय अल्पसंख्यकों के लिए विशेष अधिकारी (अनुच्छेद 350 ख)
6) वित्त आयोग (अनुच्छेद 280-281)
7) राजभाषा आयोग (अनुच्छेद 344)
8) भाषा आयोग की रिपोर्ट की जाँच करने के लिए संसदीय समिति (अनुच्छेद 344(4))
9) राज्य लोक सेवा आयोग (अनुच्छेद 315-323)
10) राज्य के महाधिवक्ता (अनुच्छेद 165)
11) प्रशासनिक न्यायाधिकरण (अनुच्छेद 323 क)
12) राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग (अनुच्छेद 338)
13) राष्ट्रीय मंत्रिपरिषद् आयोग (अनुच्छेद 338 क)

सांविधानिक प्राधिकरण

6.5.1 भारत का नियंत्रक-महालेखापरीक्षक

सन् 1950 में संविधान के अधिनियम के साथ-साथ भारत के महालेखापरीक्षक का नाम बदलकर भारत का नियंत्रक-महालेखापरीक्षक (Comptroller and Auditor General – CAG) रखा गया। भारत के नियंत्रक तथा महालेखापरीक्षक की नियुक्ति अधिपत्र द्वारा राष्ट्रपति करते हैं। इस अधिपत्र पर राष्ट्रपति के हस्ताक्षर तथा उनकी सील होती है। भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक को उसके पद से उसी ढंग से तथा उन्हीं कारणों से हटाया जा सकता है जैसे कि उच्चतम न्यायालय के किसी न्यायाधीश को।

भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक को सेवा निवृत्त होने के बाद सरकार में उसका पुनः नियोजन नहीं किया जाता। इससे उसके कार्य की स्वतंत्रता सुनिश्चित होती है। उसके वेतन, भत्तों तथा पेंशन के संबंध में संसद का मत नहीं लिया जाता है। वे भारत की समेकित निधि में से किए जाते हैं। संविधान द्वारा उनकी सेवा शर्तें एवं कर्त्तव्य एवं शक्तियाँ निर्धारित नहीं की जाती हैं। उनका निर्धारण केवल संसद करती है।

भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक केन्द्र और राज्यों तथा किसी अन्य प्राधिकरण या संस्था की लेखा परीक्षा से संबंधित उन कर्त्तव्यों का निष्पादन तथा उन शक्तियों का प्रयोग करता है जो संसद द्वारा किसी कानून के तहत निर्धारित की जाएँ। भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक की संघ से संबंधित रिपोर्ट राष्ट्रपति को प्रस्तुत की जाती है। राष्ट्रपति इस रिपोर्ट को संसद के प्रत्येक सदन में प्रस्तुत करवाते हैं। राज्य से संबंधित रिपोर्ट राज्यपाल को प्रस्तुत की जाती है। राज्यपाल इस रिपोर्ट को राज्य विधान मंडल के सक्षम प्रस्तुत करता है। पहले नियंत्रक महालेखापरीक्षक लेखाओं का रख-रखाव तथा लेखा परीक्षा का कार्य दोनों ही किया करता था। सन् 1976 में नियंत्रक-महालेखापरीक्षक ने लेखाओं के संकलन तथा रखरखाव की ज़िम्मेदारी छोड़ दी है। अब वह भारत में तथा भारत के बाहर केन्द्रीय सरकार एवं राज्य सरकारों के राजस्व से किए गए कुल व्यय की लेखा परीक्षा करता है और यह देखता है कि क्या लेखाओं में प्रदर्शित संवितरित राशि कानूनन उपलब्ध थी और क्या व्यय उस पर लागू होने वाले प्राधिकार के अनुरूप हैं। इस प्रकार नियंत्रक-महालेखापरीक्षक कार्यपालिका के कार्यों की समीक्षा करता है और उनकी रिपोर्ट संसद को प्रस्तुत करता है जिसके लिए वह स्वयं ज़िम्मेदार है। वह आकस्मिक निधि एवं लोक लेखाओं से संबंधित केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों के लेन-देन की लेखा परीक्षा करता है। वह केन्द्र तथा राज्य सरकार के किसी भी विभाग के समस्त व्यापार, विनिर्माण हानि-लाभ लेखाओं तथा तुलन-पत्रों की लेखा परीक्षा करता है और प्रत्येक मामले में अपने द्वारा परीक्षित व्यय, लेन-देन या लेखाओं के संबंध में रिपोर्ट प्रस्तुत करता है। वह केन्द्रीय या राज्य के राजस्वों से अधिकतम वित्त पोषित संगठनों के आय-व्यय की लेखा परीक्षा करता है।

6.5.2 भारत का महान्यायवादी

भारत के महान्यायवादी की नियुक्ति राष्ट्रपति करते हैं और वह राष्ट्रपति की इच्छा रहने तक पद धारण करता है। उसकी परिलब्धियों एवं सेवा शर्तों का निर्धारण राष्ट्रपति करते हैं। महान्यायवादी का कार्य उसके पास भेजे गए कानूनी मामलों में केन्द्रीय सरकार को सलाह देना है तथा उसकों सौंपे गए विधि-कर्त्तव्यों का निष्पादन करना है।

महान्यायवादी के पद को संविधान में विशेष महत्व दिया गया है। उसे भारत सरकार का प्रथम विधि अधिकारी माना जाता है। उसके कर्त्तव्य इस प्रकार हैं:

i) उन कानूनी मामलों में सलाह देना तथा विधिक प्रकार के वे अन्य कर्त्तव्य पूरे करना जो समय-समय पर राष्ट्रपति द्वारा उसको विचारार्थ भेजे या सौंपे जाएँ, और

ii) वे कार्य करना जो संविधान या तत्समय प्रवृत्त किसी विधि द्वारा उसको सौंपे गए हों (अनुच्छेद 76)।

हालाँकि भारत का महान्यायवादी स्वयं मंत्रिमंडल का सदस्य नहीं होता तथापि उसे संसद के दोनों सदनों या उसकी किसी भी बैठक में बोलने का अधिकार होता है। लेकिन उसे मत देने का अधिकार नहीं होता है।

6.5.3 भाषीय अल्पसंख्यकों के लिए विशेष अधिकारी

भाषीय अल्पसंख्यकों के लिए विशेष अधिकारी की नियुक्ति राष्ट्रपति करते हैं। उसका कार्य संविधान के तहत् भाषीय अल्पसंख्यकों को प्रदत्त सुरक्षा उपायों से संबंधित मामलों की जाँच करना है तथा ऐसे मामलों की रिपोर्ट राष्ट्रपति को प्रस्तुत करना है। इस पदाधिकारी के लिए संविधान में प्रारंभतः कोई व्यवस्था नहीं की गई थी। इस अधिकारी का पद तब सृजित किया गया जब 1956 में (राज्यों के पुनर्गठन के समय) संविधान में अनुच्छेद 350 ख का समावेश किया गया।

टिप्पणी : i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थानों का प्रयोग कीजिए।

ii) इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1) राज्य सूची में कितनी प्रविष्टियाँ हैं?

क) 65

ख) 64

ग) 61

घ) 68

2) सामूहिक ज़िम्मेदारी से क्या तात्पर्य है?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

3) भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक के कर्त्तव्यों का उल्लेख कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

4) भारत के महान्यायवादी के कर्त्तव्य क्या हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

6.6 सांविधानिक आयोग

6.6.1 वित्त आयोग

अनुच्छेद 270, 273, 275 तथा 280 के अनुसार एक वित्त आयोग गठित करने की व्यवस्था है, जिसका उद्देश्य राष्ट्रपति को केन्द्र तथा राज्यों के बीच वित्तीय संसाधनों के वितरण, संघ तथा राज्यों के बीच करों के प्राप्त उस निवल आय के वितरण जिसे उनमें विभाजित किया जाएगा या किया जा सकता है तथा ऐसे आय के अलग-अलग हिस्से को राज्यों में आवंटित करने से संबंधित उपायों की सिफारिश करना है। वित्त आयोग ऐसे सिद्धान्त भी निर्धारित करता है जो भारत की समेकित निधि से राज्यों से संबंधित राजस्वों के सहायता अनुदानों तथा सुदृढ़ वित्त (व्यवस्था) के हित में राष्ट्रपति द्वारा आयोग को प्रेषित किसी भी अन्य मामले में लागू होंगे। वित्त आयोग के गठन का विधान अनुच्छेद 280 में किया गया है। इस आयोग का गठन पाँच वर्ष बाद राष्ट्रपति द्वारा किया जाता है। इसका एक अध्यक्ष तथा चार सदस्य होते हैं जिनकी नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जाती है। इसके अध्यक्ष को सार्वजनिक कार्यों का अनुभव होना चाहिए। अन्य चार सदस्यों की नियुक्ति निम्नलिखित व्यक्तियों में से की जानी चाहिएः

क) उच्च न्यायालय का कोई न्यायाधीश या वह व्यक्ति जो सदस्य नियुक्त किए जाने के योग्य हो।

ख) वह व्यक्ति जिसे सरकार के वित्त तथा लेखाओं का विशेष ज्ञान हो।

ग) वह व्यक्ति जिसे वित्तीय मामलों तथा प्रशासन का व्यापक अनुभव प्राप्त हो।

घ) वह व्यक्ति जिसे अर्थशास्त्र का विशेष ज्ञान प्राप्त हो।

इसी प्रकार प्रत्येक राज्य में स्थानीय सरकार की वित्तीय स्थिति की समीक्षा करने और राज्यपाल को कुछ एक सिफारिश करने के लिए 73वें और 74वें संविधान संशोधनों द्वारा राज्य वित्त आयोग सृजन किया गया है। इस पर चर्चा स्थानीय सरकार से संबंधित खंड में की जाएगी।

6.6.2 निर्वाचन आयोग

स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनाव कराने के लिए एक निष्पक्ष एवं स्वतंत्र एजेंसी की आवश्यकता होती है। इस प्रयोजन के लिए संविधान के अनुसार एक निर्वाचन आयोग की स्थापना की गई है। निर्वाचन आयोग को चुनाव की समस्त प्रक्रिया तथा कार्य प्रणाली का पर्यवेक्षण करना होगा तथा निर्वाचन अधिकरण नियुक्त करने होंगे।

निर्वाचन आयोग में एक मुख्य निर्वाचन आयुक्त होता है और संविधान आयोग में अन्य आयुक्तों का प्रावधान करता है जैसा कि राष्ट्रपति समय समय पर निर्धारित करें। प्रारंभ में निर्वाचन आयोग में राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त मुख्य निर्वाचन आयुक्त था। मुख्य निर्वाचन आयोग भी राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त किया जाता है। नौवीं लोक सभा निर्वाचन के बाद निर्वाचन आयोग पुनः एक सदस्य आयोग बना। 1993 में फिर दो आयोग आयुक्तों की नियुक्ति से आयोग बहु सदस्य निकाय में परिवर्तित किया गया। यही वर्तमान व्यवस्था है। मुख्य निर्वाचन आयुक्त और निर्वाचन आयुक्तों की निकाय के निर्णयकारी शक्तियाँ एक समान हैं। मुख्य निर्वाचन आयुक्त की स्वतंत्रता सुनिश्चित करने के लिए दो प्रावधान किए गए हैं :

i) नियुक्ति के बाद उसकी सेवा शर्तों में ऐसा परिवर्तन नहीं किया जाएगा जिससे उसको नुकसान होता हो, और

ii) महाभियोग चलाए बिना उसको पद से नहीं हटाया जा सकता।

मुख्य निर्वाचन आयुक्त का प्रधान कार्य निर्वाचन सूचियाँ तैयार करने के काम सहित सभी चुनाव कार्यों का मार्ग निर्देशन, नियंत्रण तथा संचालन करना है और संसद तथा राज्य विधान मंडल के लिए सभी चुनावों और राष्ट्रपति तथा उप-राष्ट्रपति के चुनाव भी करवाना है। निर्वाचन आयोग न केवल प्रशासनिक अपितु न्यायिक कल्प (quasi-judicial) कार्य भी करता है। इसे चुनाव संबंधी विवादों को निपटाने का अधिकार है।

इसी प्रकार प्रत्येक राज्य में पंचायतों और नगरपालिकाओं के सभी चुनाव करने के लिए 73वें और 74वें संविधान संशोधनों द्वारा राज्य निर्वाचन आयोग बनाए गए हैं। राज्य निर्वाचन आयुक्त की नियुक्ति राज्यपाल द्वारा की जाती है। इस पर चर्चा स्थानीय सरकार से संबंधित खंड में की जाएगी।

6.6.3 राजभाषा आयोग

हमारे संविधान के अनुसार भारत के संघ की राजभाषा देवनागरी लिपि में हिंदी है। संविधान के अनुसार (उसके प्रारंभ होने के समय से) राष्ट्रपति को यह प्राधिकार दिया गया है कि वह प्रत्येक दस वर्ष के बाद एक आयोग गठित कर सकता है जिसमें एक अध्यक्ष तथा अन्य सदस्य होंगे।

राजभाषा आयोग राष्ट्रपति से निम्नलिखित विषयों से संबंधित सिफारिशें करता है:

क) संघ के सरकारी काम-काज के लिए हिंदी भाषा का प्रगामी प्रयोग।

ख) संघ के सभी या किसी भी सरकारी काम-काज के लिए अंग्रेज़ी भाषा के प्रयोग पर प्रतिबंध।

ग) केन्द्र के किसी एक या अधिक प्रयोजनों के लिए प्रयोग किए जाने वाले अंक।

घ) राष्ट्रपति द्वारा संघ की राजभाषा तथा संघ और राज्य तथा दो राज्यों के बीच पत्राचार के लिए भाषा तथा उसके प्रयोग के संबंध में आयोग को भेजा गया कोई अन्य मामला। इस प्रकार राजभाषा आयोग संघ और राज्यों के बीच भाषायी सामंजस्य स्थापित करने का प्रयत्न करता है।

6.6.4 संघ लोक सेवा आयोग

भारत में संघ लोक सेवा आयोग (Union Public Service Commission – UPSC) को कार्मिक प्रशासन में एक सीमित भूमिका सौंपी गई है। संघ लोक सेवा आयोग अखिल भारतीय सेवाओं, केन्द्रीय सिविल सेवाओं, प्रथम श्रेणी तथा द्वितीय श्रेणी के लिए एक भर्ती एजेंसी है। निम्न सेवाओं तथा पदों के लिए कर्मचारी भर्ती करने की ज़िम्मेदारी संबंधित विभागों की होती है। संविधान के अनुसार संघ लोक सेवा आयोग सलाह देने का कार्य करता है। संघ लोक सेवा आयोग के लिए अपने कार्यों की एक वार्षिक रिपोर्ट प्रस्तुत करना आवश्यक है। इस रिपोर्ट में संघ लोक सेवा आयोग विशेष रूप से उन मामलों की ओर ध्यान आकर्षित करता है जिनमें सरकार ने उसकी सलाह को स्वीकार नहीं किया है और जिन पर संसद में चर्चा हुई है।

केन्द्रीय सरकार निम्नलिखित मामलों में संघ लोक सेवा आयोग से परामर्श करती है:

क) सिविल सेवाओं तथा सिविल पदों के लिए भर्ती विधि से संबंधित मामले;

ख) सिविल सेवाओं के लिए नियुक्तियों और पदोन्नतियाँ करने तथा एक से दूसरी सेवा में स्थानांतरण करने और ऐसी नियुक्तियों और पदोन्नतियों या स्थानांतरणों के लिए उम्मीदवारों की उपयुक्तता के संबंध में पालन किए जाने वाले सिद्धान्त;

ग) भारत सरकार या राज्य सरकार के अधीन किसी सिविल क्षमता में काम करने वाले किसी व्यक्ति पर प्रभाव डालने वाले सभी अनुशासनिक मामले (इनमें ऐसे मामलों में संबंधित अभ्यावेदन या याचिकाएँ भी शामिल हैं);

घ) जो व्यक्ति राजनीति या किसी राज्य सरकार या ब्रिटिश शासन या किसी देशी रियासत के अधीन सिविल हैसियत से सेवा कर रहा है, या जिसने सेवा की है उस व्यक्ति से संबंधित, या उसके द्वारा प्रस्तुत ऐसा दावा कि ड्यूटी निष्पादन के दौरान उसके द्वारा किए गए, या माने गए कार्यों के संबंध में उसके विरुद्ध जो कानूनी कार्यवाही की गई है, उसके बचाव में उसके द्वारा जो खर्च किया गया है उसका भुगतान यथास्थिति, भारत की समेकित निधि या राज्य की समेकित निधि से किया जाना चाहिए; और

ङ) या सरकार के अधीन सेवा करते समय किसी व्यक्ति को आई क्षति के संबंध में पेंशन देने के लिए कोई दावा।

संविधान में यह उल्लेख नहीं किया गया है कि संघ लोक सेवा आयोग में कितने सदस्य होंगे। इस में केवल इतना ही कहा गया है कि कम से कम आधे सदस्य सरकार के ऐसे कर्मचारी होने चाहिए जिन्हें कम से कम दस वर्ष का सरकारी काम का अनुभव हो। सदस्यगण अपने पद पर पैसठ वर्ष की आयु तक या छह वर्ष की अवधि के लिए (इनमें जो भी पहले आए) काम करते रहेंगे। अध्यक्ष के लिए किसी राज्य सरकार के अधीन नियोजन स्वीकार करना वर्जित है। अन्य सदस्य केवल एक पद अर्थात् संघ लोक सेवा आयोग या राज्य लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष पद पर नियुक्ति के पात्र हैं।

6.6.5 राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग

89वें संविधान संशोधन अधिनियम 2003 में राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग के गठन का प्रावधान किया गया। आयोग में अध्यक्ष, उपाध्यक्ष, और तीन अन्य सदस्यों का प्रावधान है। राष्ट्रपति के समय समय पर, अध्यक्ष, उपाध्यक्ष और सदस्यों की सेवा शर्तों, कार्यकाल का निर्धारण करने का और राष्ट्रपति का उन्हें वारंट द्वारा और अपने हस्ताक्षर तथा सील के तहत नियुक्त करने का प्रावधान है। आयोग के कार्य निम्न प्रकार हैं:

1) आयोग अपने कार्य संचालन के लिए प्रक्रिया स्वयं विनियायतें करने की शक्ति होगी।

2) यह आयोग का कर्त्तव्य होगा:

   क) इस संविधान के अधीन या अस्थायी रूप से किसी अन्य कानून के अधीन या सरकार के किसी आदेश के अधीन अनुसूचित जातियों को दिए गए संरक्षणों से संबंधित सभी मामलों की जाँच करना और मॉनीटर करना तथा ऐसे संरक्षणों के कार्यकरण का मूल्यांकन करना

   ख) अनुसूचित जातियों के अधिकारों और संरक्षण का वंचन से संबंधित विशिष्ट शिकायतों की जाँच करना

ग) अनुसूचित जातियों के सामाजिक-आर्थिक विकास की योजना प्रक्रिया में भाग लेना और सलाह देना तथा संघ और किसी भी राज्य में उनके विकास की प्रगति का मूल्यांकन करना

घ) राष्ट्रपति को वार्षिक रूप से और किसी भी अन्य ऐसे समय जिसे आयोग उपयुक्त समझे, संरक्षणों के कार्यकरण पर रिपोर्ट प्रस्तुत करना

च) ऐसी रिपोर्टों में उन उपायों की सिफारिश करना जिन्हें अनुसूचित जातियों के संरक्षण, कल्याण और सामाजिक-आर्थिक विकास के उन संरक्षणों और अन्य उपायों के प्रभावकारी क्रियान्वयन के लिए संघ या किसी राज्य द्वारा किया जाना; और

छ) अनुसूचित जातियों के संरक्षण, कल्याण और विकास तथा प्रगति के संबंध में ऐसे अन्य कार्यों का निर्वहन जैसा कि राष्ट्रपति संसद द्वारा बनाए गए किसी भी कानून के प्रावधानों के अधीन विनिर्दिष्ट कर सकना।

3) राष्ट्रपति ऐसी सभी रिपोर्टों को संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष प्रस्तुत करने का निदेश दे सकता है, इसके साथ संघ से संबंधित सिफारिशों पर की गई कार्रवाई या की जाने वाली प्रस्तावित कार्रवाई का व्याख्यात्मक ज्ञापन तथा ऐसी सिफारिशों में यदि किसी भी सिफारिश को अस्वीकार किया जाए तो उन कारणों का विवरण भी होने का प्रावधान है।

4) यदि कोई ऐसी रिपोर्ट का कोई ऐसा भाग किसी ऐसे मामले से संबंधित है जिससे कोई राज्य सरकार संबंधित है तो ऐसी रिपोर्ट की एक प्रति राज्य के विधान मंडल के समक्ष रखी जाएगी, इसके साथ राज्य से संबंधित सिफारिशों पर की गई कार्रवाई या की जाने वाली प्रस्तावित कार्रवाई का व्याख्यात्मक ज्ञापन तथा किसी ऐसी सिफारिश को अस्वीकार, यदि कोई हो, किए जाने के कारणों के विवरण भी प्रावधान है।

5) आयोग का ऐसे खंड (क) में उल्लिखित किसी भी मामले की जाँच करने के दौरान या खंड (ख) में उल्लिखित किसी भी शिकायत में पूछताछ करने के दौरान सिविल न्यायालय की वे सभी शक्तियाँ होगी, जो किसी दावे के विचारण और विशेषकर निम्नलिखित मामलों के संबंध में होते हैं, अर्थात्

क) भारत के किसी भी भाग में किसी भी व्यक्ति को उपस्थित होने के लिए समन (summons) जारी करना और लागू करना तथा शपथ पर उससे पूछताछ करना;

ख) किसी भी प्रलेख की खोज और उत्पादन का आदेश देना

ग) शपथ पत्र पर साक्ष्य प्राप्त करना

घ) किसी भी न्यायालय या कार्यालय से उसकी प्रतिलिपि की माँग करना

च) गवाहों और प्रलेखों की जाँच के लिए अधिकार पत्र जारी करना

छ) कोई भी अन्य मामला राष्ट्रपति द्वारा नियम अनुसार तय किया जाना।

6) संघ और प्रत्येक राज्य सरकार अनुसूचित जातियों को प्रभावित करने वाले सभी मुख्य नीति संबंधी मामलों पर आयोग से परामर्श करने का प्रावधान है।

6.6.6 राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति आयोग

89वें संविधान संशोधन अधिनियम 2003 में राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति आयोग के गठन का प्रावधान किया गया। आयोग में अध्यक्ष, उपाध्यक्ष, और तीन अन्य सदस्य होंगे। राष्ट्रपति, समय समय पर, अध्यक्ष, उपाध्यक्ष और सदस्यों की सेवा शर्तों, कार्यकाल का निर्धारण करेगा। राष्ट्रपति उन्हें वारंट द्वारा और अपने हस्ताक्षर तथा सील के तहत नियुक्त करेगा। आयोग के कार्य निम्न प्रकार हैं:

1) आयोग अपने कार्य संचालन के लिए प्रक्रिया स्वयं विनियायतें करने की शक्ति होगी।

2) यह आयोग का कर्त्तव्य होगाः

   क) इस संविधान के अधीन या अस्थायी रूप से किसी अन्य कानून के अधीन या सरकार के किसी आदेश के अधीन अनुसूचित जनजातियों को दिए गए संरक्षणों से संबंधित सभी मामलों की जाँच करना और मॉनीटर करना तथा ऐसे संरक्षणों के कार्यकरण का मूल्यांकन करना

   ख) अनुसूचित जनजातियों के अधिकारों और संरक्षण का वंचन से संबंधित विशिष्ट शिकायतों की जाँच करना

   ग) अनुसूचित जनजातियों के सामाजिक-आर्थिक विकास की योजना प्रक्रिया में भाग लेना और सलाह देना तथा संघ और किसी भी राज्य में उनके विकास की प्रगति का मूल्यांकन करना

   घ) राष्ट्रपति को वार्षिक रूप से और किसी भी अन्य ऐसे समय, जिसे आयोग उपयुक्त समझे, संरक्षणों के कार्यकरण पर रिपोर्ट प्रस्तुत करना

   च) ऐसी रिपोर्टों में उन उपायों, जिन्हें अनुसूचित जनजातियों के संरक्षण, कल्याण और सामाजिक-आर्थिक विकास के उन संरक्षणों और अन्य उपायों के प्रभावकारी क्रियान्वयन के लिए संघ या किसी राज्य द्वारा किया जाना चाहिए, उनकी सिफारिश करना, और

   छ) अनुसूचित जनजातियों के संरक्षण, कल्याण और विकास तथा प्रगति के संबंध में ऐसे अन्य कार्यों जिन्हें कि राष्ट्रपति संसद द्वारा बनाए गए किसी भी कानून के प्रावधानों के अधीन विनिर्दिष्ट कर सकते है उनका निर्वहन करना।

3) राष्ट्रपति ऐसी सभी रिपोर्टों को संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष प्रस्तुत करने का निदेश देंगे, इसके साथ संघ से संबंधित सिफारिशों पर की गई कार्रवाई या की जाने वाली प्रस्तावित कार्रवाई का व्याख्यात्मक ज्ञापन तथा ऐसी सिफारिशों के किसी भी सिफारिश को अस्वीकार, यदि कोई हो, किए जाने के कारणों का विवरण भी होगा।

4) यदि कोई ऐसी रिपोर्ट का कोई ऐसा भाग किसी ऐसे मामले से संबंधित है जिससे कोई राज्य सरकार संबंधित है, ऐसी रिपोर्ट की एक प्रति राज्य के विधान मंडल के समक्ष रखी जाएगी, इसके साथ राज्य से संबंधित सिफारिशों पर की गई कार्रवाई या की जाने वाली प्रस्तावित कार्रवाई का व्याख्यात्मक ज्ञापन तथा किसी ऐसी सिफारिश को अस्वीकार, यदि कोई हो, किए जाने के कारणों का विवरण भी होगा।

5) आयोग का ऐसे खंड (क) में उल्लिखित किसी भी मामले की जाँच करने के दौरान या खंड (ख) में उल्लिखित किसी भी शिकायत में पूछताछ करने के दौरान सिविल न्यायालय की वे सभी शक्तियाँ होगी, जो किसी दावे के विचारण और विशेषकर निम्नलिखित मामलों के संबंध में होते हैं, अर्थात्

क) भारत के किसी भी भाग में किसी भी व्यक्ति को उपस्थित होने के लिए समन जारी करना और लागू करना तथा शपथ पर उससे पूछताछ करना

ख) किसी भी प्रलेख की खोज और उत्पादन का आदेश देना

ग) शपथ पत्र पर साक्ष्य प्राप्त करना

घ) किसी भी न्यायालय या कार्यालय से उसकी प्रतिलिपि की माँग करना

च) गवाहों और प्रलेखों की जाँच के लिए अधिकार पत्र जारी करना

छ) कोई भी अन्य मामला नियम द्वारा राष्ट्रपति से तय होना।

6) संघ और प्रत्येक राज्य सरकार अनुसूचित जनजातियों को प्रभावित करने वाले सभी मुख्य नीति संबंधी मामलों पर आयोग से परामर्श करेंगे।

बोध प्रश्न 3

टिप्पणी : i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थानों का प्रयोग कीजिए।

ii) इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1) वित्त आयोग के क्या कार्य हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) भारत में राजभाषा आयोग की भूमिका बताइए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

3) मुख्य निर्वाचन आयुक्त के मुख्य कार्य क्या हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

6.7 सारांश

हमारा संविधान एक गृहीत संविधान है। इसके उपबंधों को विभिन्न स्रोतो से लिया गया है तथा उन्हें लिखित रूप से उचित ढंग से संहिताबद्ध किया गया है। यह संविधान नम्यता एवं अनम्यता का अनूठा सम्मिश्रण है। इसमें संघीय एवं एकात्मक दोनों ही प्रकार की विशेषताओं का समावेश है। संघ तथा राज्यों के बीच विधायी शक्तियों का विभाजन तीन सूचियों — संघ सूची, राज्य सूची तथा समवर्ती सूची — के अनुसार किया गया है। औपचारिक रूप से कार्यपालन शक्तियाँ राष्ट्रपति के पास होती हैं लेकिन व्यवहारतः मंत्रिपरिषद् (जिसके अध्यक्ष प्रधानमंत्री होते हैं) के ही पास नीति निर्माण की वास्तविक शक्तियाँ हैं। ऐसे अनेक सांविधानिक प्राधिकरण एवं आयोग हैं जो यह देखते हैं कि क्या सरकार का कार्य उचित ढंग से तथा संविधान में दिए गए उपबंधों के अनुसार चल रहा है।

6.8 शब्दावली

महाभियोग प्रक्रिया : यह भारत के राष्ट्रपति, उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों, भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक तथा मुख्य निर्वाचन आयुक्त को हटाने का एक तरीका है। इस प्रक्रिया के अनुसार एक संकल्प पेश किया जाता है जिसमें प्रस्ताव दिया गया होता है। यह संकल्प एक लिखित नोटिस के 14 दिन बाद प्रस्तुत किया जाता है जिस पर संसद के दोनों में से किसी एक सदन के सदस्यों (जिनकी संख्या कुल सदस्य संख्या के 1/4 से कम नहीं होनी चाहिए) के हस्ताक्षर होते हैं और जो सदन के दो-तिहाई सदस्यों द्वारा पारित होता है।

अनुसमर्थन : औपचारिक अनुमोदन या सहमति प्रदान करना।

अवशिष्ट शक्तियाँ : किसी ऐसे मामले के संबंध में कानून बनाने का अधिकार जिसको केन्द्रीय विधान मंडल की तीनों में से किसी भी सूची में शामिल नहीं किया गया हो तथा अंतिम रूप से यह निश्चित करना कि कोई मामला विशेष अवशिष्ट शक्ति के अधीन आता है या न्यायालयों के अधीन।

पृथक (secede) होने का अधिकार : राज्यों द्वारा संघ की सदस्यता से औपचारिक रूप से विलग या पृथक होने का अधिकार। भारतीय राज्यों को विलग होने का अधिकार नहीं है।

6.9 संदर्भ एवं उपयोगी पुस्तकें

Basu, D.D, 1993, *Introduction to the Constitution of India*, Prentice Hall of India Private Ltd., New Delhi.

Kapur, A.C, 1970, *Select Constitutions*, S. Chand and Co. Ltd., New Delhi.

Narang, A.S, 1985, *Indian Government and Politics*, Gitanjali Publishing House, New Delhi.

Pylee, M.V, 1997 (6th Ed.), *Constitutional Government in India*, S. Chand and Co. Ltd., New Delhi.

6.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) ख)

2) आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें होनी चाहिएः
   - हमारे संविधान में अन्य देशों के न्यायिक निर्णयों के अशोधित परिणाम शामिल हैं
   - विस्तृत उपबंध
   - देश की विशालता
   - देश की विशेष समस्याएँ

3) आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें होनी चाहिएः
   - कार्यपालिका विधान मंडल का एक भाग है
   - कार्यपालिकाकं विधान मंडल के प्रति उत्तरदायी है

4) आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें होनी चाहिएः
   - दो सरकारें — राष्ट्रीय और राज्य स्तर पर
   - अनेक राज्यों का शामिल होना
   - संघीय राज्य संविधान से सत्ता ग्रहण करता है
   - राज्यों को विलग होने का अधिकार नहीं है
   - केन्द्र तथा राज्यों के बीच शक्तियों का विभाजन

5) उपभाग 6.2.5 देखिए

बोध प्रश्न 2

1) ग)

2) भाग 6.4 देखिए

3) उपभाग 6.5.1 देखिए

4) उपभाग 6.5.2 देखिए

बोध प्रश्न 3

1) आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें होनी चाहिएः
   - वित्त आयोग का कार्य केन्द्र तथा राज्यों के बीच करों से प्राप्त निवल राशि के वितरण को देखना है
   - सहायता अनुदान पर लागू होने वाले सिद्धान्त

2) आपके उत्तर में निम्नलिखित बातें होनी चाहिएः
   - राजभाषा आयोग हिन्दी भाषा के आगामी प्रयोग के संबंध में सिफारिशें करता है
   - राजकाज के लिए अंग्रेज़ी के प्रयोग पर प्रतिबंध
   - प्रयोग किए जाने वाले अंक

3) उपभाग 6.6.2 देखिए